अध्याय -3

सारंगढ़ रियासत की राजनैतिक व्यवस्था *(सन् 1854 ई- 1948 ई. तक)*

(सारंगढ़ रियासत का ब्रिटिश सत्ता से संबंध)

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ईस्ट इण्डिया कंपनी द्वारा बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा की दीवानी प्राप्ति तथा नियत्रण स्थापना से सारंगढ़ रियासत सहित संबलपुर अठारह गढ़जात राज्यों की सीमाएं ब्रिटिश प्रशासित क्षेत्र को स्पर्श करने लगी , चूंकि सारंगढ़ रियासत की भौगोलिक स्थिति उड़ीसा, बिहार तथा छत्तीसगढ़ के मध्य में थी, अतः स्वाभाविक रूप से कंपनी के अधिकारियों का ध्यान सारंगढ़ रियासत की ओर आकृष्ट होने लगा तथा वे इस भू-भाग को अपने राजनीतिक प्रभाव में लाने की दिशा में प्रयत्नशील हो गये।

संबलपुर अठारहगढ़जात राज्यों जिनमें सारंगढ़ रियासत सम्मिलित थी। मराठों का नियंत्रण बना हुआ था , किन्तु मराठों का यह नियंत्रण वास्तविक कम और नाममात्र का ही अधिक था। संबलपुर के महाराजा ने सन् 1781 ई. में मराठों के विरूद्ध विद्रोह कर दिया था। मराठों ने इस क्षेत्र में अत्यंत दमनकारी ढंग से शासन किया। अतः सन 17 ८८ ई. में जब महिपतराव को छत्तीसगढ़ का सूबेदार नियुक्त किया गया तब संबलपुर के महाराजा ने पुनः विद्रोह कर दिया और संबलपुर क्षेत्र तथा अन्य छोटे-छोटे राज्य स्वतंत्र हो गये तथा सन् 1800 ई. तक स्वतंत्र बने रहे। सारंगढ़ रियासत भी इन स्वतंत्र राज्यों में से एक थी। इस स्वतंत्रता का रघुजी द्वितीय ने पुरजोर विरोध किया। अंततः 5 अप्रैल सन 1800 को मराठों ने संबलपुर किले पर अचानक धावा बोलकर पुनः अधिकार कर लिया। [1]

भोंसलो पर अंग्रेजों का दवाब बढ़ता जा रहा था अंततः सन् 1803 ई. में सिंधिया के साथ मिलकर उन्होने अंग्रेजों के विरूद्ध युद्ध छेड़ दिया , [2] किन्तु पराजित हुए तथा देवगांव की संधि हुई। संधि की शर्तों में एक शर्त यह भी थी कि उडीसा और छत्तीसगढ़ के जमींदारों से जो संधियाँ अंग्रेजों ने की है उन्हें भोसलों द्वारा मान्यता देनी होगी।[3]

जनवरी सन् 1804 में द्वितीय मराठा युद्ध की समाप्ति के पश्चात ब्रिटिश सेना छत्तीसगढ़ पर अधिकार के लिए रवाना हुई , ले. ब्राऊटन ने संबलपुर तथा समीपवर्ती क्षेत्रों को अधिकृत कर लिया। रघुजी छत्तीसगढ़ से होने वाली आय को छोडने तैयार नहीं थे। उन्होने नागपुर स्थित रेसीडेन्ट मि. मास्टुअर्ट एलफिंस्टन से संधि की उस धारा को रद्द करने कहा जिसका सीधा संबंध छत्तीसगढ़ से था , किन्तु रेसीडेन्ट ने 9 जून 1804 को युद्ध की धमकी के साथ 24 घण्टे का अल्टीमेटम देते हुए रघुजी को छत्तीसगढ़ के जमींदारों की सूची थमा दी। अतः विवश होकर 11 जून 1804 को रघुजी ने संदर्भित कागजात पर दस्तखत कर दिये। [4] जिसके चलते सारंगढ़ रियासत रघुजी के हाथ से निकल गया।

मराठों की पराजय तथा ब्रिटिश संरक्षण का सारंगढ़ सहित अनेक राज्यों के शासकों ने स्वागत किया। वास्तव में ये शासक मराठा शासन पर आश्रित रहने की स्थिति से मुक्त होना चाहते थे क्योंकि वे उनसे बहुत अधिक ऊब गये थे। [5]

डी. डब्ल्यू हण्टर ने लिखा है - "मैंने इस अवधि में अभिलेखों का सावधानीपूर्वक परीक्षण किया है, किन्तु उसमें नागरिक प्रशासन जैसी कोई बात देखने में नहीं आई। मराठा घुडसवार सेना प्रतिवर्ष नियत अवधियो में इस प्रदेश में लूटपाट करती थी और लूट का माल लेकर चली जाती थी , इन चालीस वर्षो के दौरान ग्रामीण शासन ही इस विपदा में मुक्त था और उनका आंतरिक संगठन इनकी एकमात्र शासन व्यवस्था थी जो हमारे आगमन तक बनी रही।" [6]

यद्यपि सारंगढ़ रियासत के शासक विश्वनाथ साय ने ब्रिटिश संरक्षण का स्वागत किया था, तथापि अंग्रेजों ने उन्हें यह स्पष्ट रूप से बता दिया था कि यदि वे मराठा शासन पर आश्रित होने की स्थिति अपना लेंगे तो ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सत्ता का संरक्षण वापस ले लिया जायेगा। इसके जवाब में विश्वनाथ साय ने 26 मार्च 1804 को ले. कर्नल ब्राऊटन के समक्ष एक याचिका प्रस्तुत की जिसमें उन्होंने घोषणा की कि उसने स्वेच्छा से अपने आप को ब्रिटिश शासन को समर्पित कर दिया है तथा उन्हें अपना मुख्य संरक्षक मानते हैं। [7] 11 जुलाई सन् 1804 को सारंगढ़ रियासत अंग्रेजों के अधिन संबलपुर तालुके में शामिल कर लिया गया। [8]

स्पष्ट है कि सारंगढ़ रियासत मराठा शासन से तंग आ चुकी थी, अतः ब्रिटिश शासन की छत्रछाया में रहना उसने स्वीकार किया। सारंगढ़ रियासत में ब्रिटिश प्रभाव की स्थापना का यह प्रारंभिक युग था।

इसी समय लार्ड कार्नवालिस दूसरी बार ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के गर्वनर जनरल के रूप में भारत आये। उन्होंने रियासतों के प्रति अहस्तक्षेप की नीति का पालन करने तथा भोंसलो को संतुष्ट रखने की दृष्टि से संबलपुर गढ़जात राज्यों को नागपुर राजा को सौंपने का निर्णय लिया। जिसके अनुरूप सन् 1805 में स्थानीय शासकों से पुनः समझौता वार्ता आरंभ की गई तथा लंबे विचार विमर्श के बाद सारंगढ़ रियासत के राजा विश्वनाथ साय ने इस प्रस्ताव को स्वीकृति दे दी। [9]

इस अंतरण के पश्चात् सारंगढ़ के राजा विश्वनाथ साय ने सन् 1805 में नागपुर राजा के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित कर लिये तथा अनेक अवसरों पर व्यंकोजी की अमूल्य सेवा करके नागपुर शासन से विभिन्न उपहार आदि प्राप्त किये। [10]

सन 1811 में बनारस यात्रा के दौरान नागपुर राजा व्यंकोजी की मृत्यु हो गई तथा उसके उत्तराधिकारी रघुजी द्वितीय की भी मार्च 1816 में मृत्यु हो गई तब उसका पुत्र परसोजी नागपुर राज्य की गद्दी पर आसीन हुआ, उसने संपूर्ण शासनाभार अपने चचेरे भाई अप्पा साहब को सौंप दिया। [11] कुछ समय पश्चात अप्पा साहब ने अपनी भावी महत्वाकांक्षाओं के चलते 27 अप्रैल 1816 को गुप्त रूप से अंग्रेजों से सहायक संधि कर ली। [12] संधि की शर्तों के तहत सारंगढ़ रियासत सहित आसपास के क्षेत्र अप्पा साहब के अधिकार में चले गये। [13] 1 फरवरी सन् 1817 को अप्पा साहब के गुप्त आदेश द्वारा परसोजी को गला छोटकर मार डाला गया। [14]

अप्पा साहब अंग्रेजो के साथ की गई संधि से असंतुष्ट एवं अप्रसन्न था। अतः इस पराधीनता से मुक्ति पाने प्रयत्नशील हो गया तथा षड़यंत्र रचना आरंभ किया। उसने पिण्डारी नेता चीतू से मित्रता कर अनेक सैन्य टुकड़ियां निर्मित की तथा अंग्रेजों के विरूद्ध बाजी राव पेशवा से मित्रता कर ली। [15] परिणामतः पिण्डारियों के दमन के लिए अंग्रेजों द्वारा छेड़ा गया अभियान तृतीय मराठा युद्ध में परिणित हो गया तथा नवंबर 1817 में सीताबर्डी का युद्ध हुआ। युद्ध प्रारंभ होने के पूर्व अप्पा साहब ने संबलपुर और छत्तीसगढ़ के राजाओं जिनमें सारंगढ़ भी शामिल था तथा आसपास के समस्त सरदारों को अपने समर्थकों सहित साथ देने के लिए कहा किन्तु किसी ने भी उसका आदेश नहीं माना तथा साथ देने से इंकार कर दिया। [16]

तृतीय आंग्ल -मराठा यु द्ध की समाप्ति के पश्चात् जनवरी 1818 ई. में भोंसले तथा अंग्रेजो के मध्य हुई संधि के तहत सारंगढ़ रियासत भोसलो के द्वारा अंग्रेजों को हस्तांतरित कर दी गई। [17]

स्पष्ट है, कि सन् 1818 ई. से सारंगढ़ रियासत ब्रिटिश शासन के नियंत्रण में आ गया, किन्तु सारंगढ़ रियासत के शासकों को ब्रिटिश शासन ने समय-समय पर विभिन्न सनदों के माध्यम से शासन की नियंत्रित शक्तियाँ प्रदान की, बदले में उनसे इकरारनामें लिये गये। यहाँ यह तथ्य उल्लेखनीय है, कि छत्तीसगढ़ के इतिहास में ब्रिटिश शासन का शुभारंभ सन् 1854 ई. से होता है, जबकि सारंगढ़ रियासत में ब्रिटिश नियंत्रण का आरंभ सन् 1818 से हुआ जो कि भारत की आजादी तक अंग्रेजो के नियंत्रण में बना रहा तथा कालांतर में भारतीय संघ में विलीन हो गया।

3.1 सारंगढ़ रियासत: ब्रिटिश नियंत्रण :

सत्ता हस्तांतरण की प्रक्रिया से निपटने के पश्चात् ब्रिटिश अधिकारियों ने रियासत के सामान्य प्रशासन की ओर ध्यान केन्द्रित किया। कम्पनी यदि चाहती तो समूचा क्षेत्र ब्रिटिश साम्राज्य में सम्मिलित किया जा सकता था, किन्तु उनकी नीति इस क्षेत्र में अपना प्रभाव कायम करने तक सीमित रही। रियासत की दूरस्थ स्थिति, क्षेत्र की प्राकृतिक कठिनाईयां, उनकी विरल जनसंख्या,अपर्याप्त उत्पादन, तथा पिछड़ी सामाजिक स्थिति को देखते हुये इस क्षेत्र में अंग्रेजों ने प्रत्यक्ष शासन स्थापित करना अव्यावहारिक समझा तदनुसार प्रशासकीय क्षेत्र एवं अधिकार स्थानीय शासक को सौंप दिये गये। [18]

18 सितंबर सन् 1818 को मेजर एफसेज ने सारगढ़ में समस्त, जमीदारों, गौटियाओं, तथा रैय्यतों को आदेश दिया, कि वे सारंगढ़ के शासक भीखमसाय को मालगुजारी अदा करे।[19] सांरगढ़ रियासत से मराठा शासनकाल में वसूल किये जाने वाले कर से अपेक्षाकृत कम राशि टकौली के रुप में निर्धारित किये जाने का निश्चय किया गया। [20] सन् 1818 में 1312 रु. सिक्का कलदार वार्षिक मालगुजारी अंग्रेजो ने तय कर दी।[21]

सन् 1821 में सारंगढ़ के शासक से इकरारनामा लिया गया तथा सनद प्रदान की गई [22] तथा सन् 1827 ई. में सारंगढ़ के शासक भीखमसाय के साथ 5 वर्षो के लिये नाममात्र का बंदोबस्त किया गया, परन्तु उसकी पुनरावृत्ति और निर्धारित टकौली राशि का पुनरीक्षण वास्तव में बहुत समय तक नहीं किया गया। इस बंदोबस्त के अंतर्गत सारगढ रियासत के लिये 1312 रू. सिक्का कलदार वार्षिक टकौली निश्चित की गयी जिसे कालांतर में 1400 सरकारी रुपये में परिवर्तित कर दिया गया। [23] इस अवसर पर सारंगढ़ के शासक से इकरारनामें लिये गये तथा उन्हें न्यायिक एवं पुलिस प्रशासन की नियंत्रित शक्तियाँ प्रदान की गई, किसी अभियोगी को 7 वर्ष (कालांतर में इसमें 6 माह की कटौती कर ली गई) तक के कारावास का दण्ड दे सकने का अधिकार प्रदान किया। यद्यपि दीवानी तथा राजस्व मामलों में शासक को सम्पूर्ण शक्तियाँ प्राप्त थी, तथापि यह शक्तियाँ ब्रिटिश शासन द्वारा नियंत्रित एवं बाधित थी। [24]

सारंगढ़ रियासत द्वारा ली जाने वाली वार्षिक टकौली की इस निर्धारित राशि का पुनरीक्षण सन् 1866 तक नहीं किया गया। सन्1867 में इसका पुनरीक्षण कर टकौली की राशि 1400 रुपयों से घटाकर 1350 रु. कर दी गयी। [25]

स्पष्ट है, कि सारंगढ़ रियासत के शासक द्वारा ईस्ट इण्डिया कम्पनी कम्पनी को दी गई कबूलियते तथा ब्रिटिश शासन द्वारा निर्धारित टकौली राशि की अदायगी से स्वयमेव प्रमाणित होता है, कि सन् 1818 में सारंगढ़ रियासत ब्रिटिश प्रभुसत्ता के अंर्तगत।

इधर दूसरी ओर, सन् 1818 ई. में अंग्रेजों ने रघुजी तृतीय को नागपुर की गद्दी पर बिठाया तथा छत्तीसगढ़ के शासन के लिये मेजर पी. वान्स. एगन्यू को सुप्रिन्टेण्डेण्ट बनाकर भेजा। भोंसले के द्वारा नियुक्त सूबों के सारे अधिकार छीन लिये गये। इस प्रकार सन् 1818 में अंग्रेज छत्तीसगढ़ के एकछत्र शासक हो गये। उन्होनें रायपुर तथा रतनपुर में सैनिक छावनियाँ स्थापित की। [26]

उल्लेखनीय है कि नव नियुक्त मराठा शासक रघुजी तृतीय अल्पवयस्क था , अत: इसके वयस्क होने तक छत्तीसगढ़ में सन् 1818 -1830 ई. तक अंग्रेजो का प्रतिनिधि शासन व्यवस्था कायम रहा। सन् 1818-1830 ई. तक अंग्रेजों ने छत्तीसगढ़ के विभिन्न राजाओं के शासन में कोई हस्तक्षेप नहीं किया। कर्नल एगन्यू पुरानी शासन प्रणाली को संशोधित रुप देता रहा। वह सन् 1818-1825 ई. तक अधीक्षक के पद पर रहा। छत्तीसगढ़ तथा देशी रियासतों पर सुविधापूर्वक निगरानी रख सकने की दृष्टि से उसने रतनपुर के स्थान पर रायपुर को सदर मुकाम बनाया। [27]

सन् 1826 में रघुजी के वयस्क हो जाने पर रेसीडेण्ट जेनकिंस और रघुजी के मध्य हुई संधि के अनुसार अंग्रेजों ने छत्तीसगढ़ की जमीदारियों पर अपना अधिकार कायम रखा और उसके बदले भोंसला राजा को एक निश्चित राशि देना स्वीकार किया। कालांतर में लार्ड विलियम बैंटिक ने इस संधि में कुछ सुधार किया जिसके परिणाम स्वरूप रघुजी के हाथ में राज्य तो आ गया, किन्तु सत्ता जाती रही। [28]

11 दिसंबर 1853 को एक माह की लंबी बीमारी के पश्चात् नागपुर के अंतिम राजा रघुजी तृतीय की मृत्यु हो गयी, इसके साथ ही नागपुर राज्य का राजनीतिक गौरव समाप्त हो गया। [29] सन् 1854 में भारत के गर्वनर जनरल लार्ड डलहौजी की नीति के अनुसार नागपुर राज्य ब्रिटिश सल्तनत में मिला गया और छत्तीसगढ़ इलाके के पहिले अफसर केप्टिन इलियट मुर्करर हुये। [30] शासन पद्धति वही कायम रही जो कर्नल एगन्यू ने चलायी थी। [31]

इस प्रकार सन् 1854 ई. में सम्पूर्ण छत्तीसगढ़ क्षेत्र ब्रिटिश संप्रभुत्ता के अधीन शामिल हो गया, जो कि भारत की आजादी तक कायम रहा। अंग्रेजो ने छत्तीसगढ़ के आंचलिक इतिहास को काफी समय तक प्रभावित किया तथा प्रशासनिक तथा राजनैतिक दृष्टिकोणों से छत्तीसगढ़ काफी विकास किया।

सन् 1857 की क्रांति तथा ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की सत्ता की समाप्ति पश्चात् सन् 1858 में भारत का प्रशासन ब्रिटिश ताज के हाथों में चला गया। महारानी विक्टोरिया की घोषणा के अनुसार रियासतों केसाथ कंपनी के

द्वारा की गई संधियों और सनदों को ताज के द्वारा यथावत् स्वीकार कर रियासतों को ताज के अधीन लाया गया। साथ ही यह भी आश्वासन दिया गया कि ब्रिटिश सरकार भविष्य में रियासतों के मामले में और अधिक हस्तक्षेप नहीं करेगी। [32]

उपरोक्त व्यवस्था के तहत् सारंगढ़ रियासत बाईसराय के माध्यम से सीधे ब्रिटिश ताज की अधिसत्ता में सम्मिलित हो गई। यद्यपि ब्रिटिश सरकार ने पहले ही रियासतों के मामलें में और अधिक हस्तक्षेप नहीं करने की घोषणा कर चुकी थी, तथापि समय-समय पर रियासतों पर ब्रिटिश नियंत्रण कठोर होता गया।

सन् 1861 में सागर नर्मदा क्षेत्र, नागपुर तथा छत्तीसगढ़ को मिलाकर मध्यप्रांत का निर्माण किया गया तथा यहाँ का प्रशासन एक चीफ कमिश्नर के नियंत्रण में रखा गया था । यह उल्लेखनीय है, कि सीताबर्डी के युद्ध के पश्चात् सन् 1818 में अंग्रेजों के अधीन सागर नर्मदा क्षेत्र आ चुका था, तत्पश्चात् सन् 1854 में नागपुर तथा छत्तीसगढ़ का प्रदेश अंग्रेजों के अधिकार में आया। प्रारंभ में दोनों क्षेत्र पृथक प्रशासनिक ईकाई थे। [33] मि. कुलर ने लिखा है- जो अनेक पिलपिले टुकड़ों कि सदृश क्षेत्र था, जिनकी भाषा, मनुष्य एवं परिस्थितियां सभी कुछ अलग थी को मिलाकर एक प्रांत बना दिया गया। [34]

मध्यप्रांत का जन्म एक आकस्मिक घटना नहीं है , अपितु एक सोची विचारी घटना का उद्घाटन मात्र है। बहुत दिनों से अंग्रेज प्रदेशों का भार कम करने हेतु प्रयत्नशील थे। नये जीते हुये या प्राप्त किये हुये प्रदेशों को एक सूत्र में बांधने के लिये आवश्यक था, कि एक पृथक प्रांत बनाया जाये। [35] सन् 1857 की क्रांति से उत्पन्न परिस्थितियों से निपटने के लिये कुछ कदम उठाने आवश्यक थे। [36] संबलपुर, रायपुर तथा नर्मदा क्षेत्र में क्रांतिकारी सक्रिय थे, अत: इस क्षेत्र की गतिविधियों पर सक्रिय नियंत्रण एक पृथक प्रांत द्वारा अच्छी तरह हो सकता था। [37]

ब्रिटिश सरकार के समक्ष इस नवगठित प्रांत जिसमें जमीदारियों की संख्या बहुत अधिक थी, उनकी व्यवस्था का प्रश्न उपस्थित हुआ। सभी जमीदारियों को रियासत का दर्जा दिये जाने पर प्रशासनिक कठिनाईयां उत्पन्न होने की आशंका थी, किन्तु ब्रिटिश शासन के हित में कुछ देशी रियासतों का निर्माण किया जाना आवश्यक समझा गया जो आपत्ति काल में उनका साथ दे सके। [38]

लार्ड केनिंग ने देशी रियासतों के संबंध में नपे तुले शब्दों में उनकी प्रशंसा करते हुये कहा था -" ब्रिटिश साम्राज्य विद्रोह के भयंकर तूफान में फंस गया था, तब चे रियासतें बिखरी हुई चट्टानों की भांति सीना ताने खड़ी रही।" [39] लार्ड कर्जन ने भी यह स्वीकार किया कि- "यदि गदर के तूफान में देशी राज्यों ने बांध का काम नहीं किया होता तो वह तूफान हमारी सारी सत्ता को बहा ले गया होता।" [40]

अत: ब्रिटिश सरकार के निर्देश पर देशी रियासतों के निर्माण की दिशा में विभिन्न अधिकारीगण सक्रिय हो गये। सन् 1862 में संबलपुर के डिप्टी कमिश्नर मेजर इम्फे ने अपने नियंत्रण क्षेत्र में आने वाले अठारह गढ़ जात राज्यों या जमींदारियों की प्रारंभिक स्थिति से लेकर सन् 1862 तक ब्रिटिश सरकार के साथ उनके संबंधों पर अपना विस्तृत प्रतिवेदन नागपुर के चीफ कमिश्नर को प्रेषित किया। [41]

सन् 1863 में मध्यप्रांत के चीफ कमिश्नर रिचर्ड टेम्पल ने क्षेत्रीय अधिकारियों द्वारा प्रेषित प्रतिवेदनों, नागपुर राजा के संबंध में रिचर्ड जेनकिन्स द्वारा सन् 1827 में लिखे प्रतिवेदन तथा अन्य विविध प्रशासनिक अभिलेखों के अध्ययन उपरांत मध्यप्रांत की क्रमशः नागपुर जमीदारियों, संबलपुर के गढ़जात राज्यो तथा सागर नर्मदा क्षेत्र के राजाओं एवं जमीदारों पर अपना विस्तृत प्रतिवेदन ब्रिटिश सरकार को प्रेषित किया। [42]

तत्पश्चात् सन् 1865 में ब्रिटिश सरकार ने मध्यप्रांत के इन छोटे राज्यों और जमीदारियों का उनके क्षेत्रफल, आबादी, राजस्व तथा उनके द्वारा भुगतान किये जाने वाले आयकर की राशि आदि के आधार पर वर्गीकृत कर मध्यप्रांत में कुछ रियासतों के निर्माण के लिये आवश्यक रुपरेखा तैयार की, [43] तथा विचारोपरांत यह निर्णय लिया गया कि बहुत पुरानी शक्तिशाली और अधिक आबादी वाली जमीदारियों को सामंती रियासत (फ्यूडेटरी स्टेट) के रुप में मान्यता प्रदान की जाये और शेष छोटी जमीदारियों को मध्यप्रांत में शामिल कर लिया जाये, परिणामतः सारंगढ़ रियासत (जिसे अब तक जमींदारी या करद राज्य के रुप में मान्यता प्राप्त थी) सहित पन्द्रह रियासतों का उद्भव हुआ जिनमें से केवल एक मकराई (होशंगाबाद जिला) को छोड़ शेष छत्तीसगढ़ क्षेत्र में स्थित थी। [44]

सारंगढ़ सहित छत्तीसगढ़ की अन्य रियासतों का नियंत्रण विभिन्न काल में अलग-अलग स्थानों से होता रहा है। सारंगढ़ रियासत का नियंत्रण सर्वप्रथम दक्षिण -पूर्व सीमांत एजेंसी हजारीबाग बिहार द्वारा सन् 1837 तक होता रहा, तत्पश्चात् सन् 1837-1860 ई. तक की अवधि में प्रमुख सहायक दक्षिण-पूर्व सीमांत एजेंसी रांची तथा 1861 तक अधीक्षक ट्रिब्यूटरी महल कटक द्वारा होता रहा, कालांतर में सन् 1862 में सारंगढ़ रियासत मध्यप्रांत में सम्मिलित कर ली गई। [45]

सारंगढ़ रियासत का नियंत्रण कमिश्नर रायपुर को सौंपा गया , जो डिप्टी कमिश्नर संबलपुर की सहायता से कार्य संपादित करता था। डिप्टी कमिश्नर संबलपुर जिले के अपने कार्यो के संपादन में अधिक व्यस्त रहने के कारण रियासत से संबंधित मामलों को निपटाने के लिये मुश्किल से समय निकाल पाता था , अतः रियासती मामलों के निर्णय काफी लंबे समय तक लंबित रहा करते थे। उन्होने अपनी इस समस्या की ओर ब्रिटिश सरकार को अवगत कराया, परिणामतः सारंगढ़ रियासत और जमीदारियों के सीमा विवाद से संबंधित लंबित प्रकरणों के निपटारे तथा मालगुजारी के पुनरीक्षण हेतु रियासत के राजस्व आदि की जांच कर प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के लिये एक ऑफिशिएटिंग डिप्टी कमीश्नर तथा एक एक्स्ट्रा असिस्टेण्ट कमीश्नर सन् 1866 ई. में एक वर्ष की अवधि के लिये अस्थायी प्रतिनियुक्ति पर संबलपुर में नियुक्त किया गया। [46] सन् 1887 में सारंगढ़ रियासत में नियंत्रण हेतु कमिश्नर रायपुर की अधीनता में पोलिटिकल एजेंट नामक अधिकारी का पद सृजन किया गया। [47]

सन् 1887 में स्थापित यह व्यवस्था सन् 1920 तक कायम रही। सन् 1919 में ब्रिटिश शासन ने पोलिटिकल एजेंट छत्तीसगढ़ स्टेट्स का पदनाम परिवर्तित कर पोलिटिकल एजेंट सी.पी. फ्यूडेटरी स्टेट्स कर दिया। पोलिटिकल एजेंट रायपुर को मध्यप्रांत की समस्त रियासतों के लिये जस्टिस ऑफ पीस नियुक्त किया गया तथा उसके नियंत्रण में सारंगढ रियासत के फौजदारी मामलों के लिये डिप्टी कमिश्नर बिलासपुर तथा असिस्टेण्ट कमिश्नर बिलासपुर को जिम्मेदारी सौंपी गई। [48]

इस व्यवस्था के अनुरुप रियासती मामलों से संबंधित प्रकरण कई अधिकारियों के माध्यम से होकर केन्द्र

सरकार तक पहुंचते थे, जिसमें अत्यधिक बिलंब होता था , अत: सन् 1820 में पोलिटिकल एजेंट को सीधे चीफ कमिश्नर नागपुर से संबद्ध करते हुये कमिश्नर रायपुर को रियासती कार्यो की अतिरिक्त जिम्मेदारी से मुक्त कर दिया गया।[49]

किन्तु, यह व्यवस्था भी स्थायी तौर पर कायम नहीं रह सकी तथा इसमें परिवर्तन करना आवश्यक समझा गया। चूंकि भारत सरकार इण्डियन स्टेट्स इन्क्वारी कमेटी की सिफारिशों को रियासती क्षेत्रों में शीघ्र लागू करना चाहती थी तथा बटलर कमेटी के प्रतिवेदन के आधार पर मध्यप्रांत की रियासतों के संवैधानिक स्थिति के अध्ययन के लिये नियुक्त ब्रिटिश अधिकारी लोथियन ने सन् 1932 में अपने प्रतिवेदन में उक्त क्षेत्र की समस्त रियासतों का केन्द्र सरकार के साथ सीधा राजनायिक संबंध स्थापित करने का सुझाव दिया था।[50] अत: तत्कालीन गर्वनर जनरल और लंदन स्थित भारत सचिव ने आंशिक संशोधन के साथ लोथियन के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया तथा 1 अप्रैल सन् 1933 से बिहार, उड़ीसा तथा मध्यप्रांत की सारंगढ़ रियासत सहित छत्तीसगढ़ की रियासतों का संबंध ईस्टर्न स्टेट्स एजेंसी के साथ हो गया तथा गर्वनर जनरल के एजेंट के पद पर ई. सी. गिब्सन नियुक्त किये गये तथा उनकी सहायता के लिये रांची एवं संबलपुर में एक-एक सचिव की नियुक्ति की गयी। इस व्यवस्था के अंतर्गत सारंगढ़ रियासत गर्वनर जनरल केएजेंट के अधीन हो गया।[51]

सन् 1935 में बंगाल क्षेत्र की रियासतों को इस एजेंसी में शामिल कर लिया गया, तब नये ढंग से इसका पुर्नगठन किया गया। गर्वनर जनरल के एजेंट की जगह रेसीडेण्ट को ईस्टर्न स्टेट्स एजेंसी का प्रभार सौंपा गया। रेसीडेण्ट की सहायता के लिये उड़ीसा, छत्तीसगढ़ तथा बंगाल में एक-एक पोलिटिकल एजेंट इन क्षेत्रों की रियासतों के लिये क्रमश: संबलपुर,रायपुर एवं कलकत्ता में नियुक्त किये गये।[52] इस नवीन व्यवस्था के अंतर्गत सारंगढ़ रियासत ब्रिटिश शासन की समाप्ति तक रही।

ब्रिटिश सरकार द्वारा देशी राज्यों पर नियंत्रण रखने के लिये उच्च स्तर पर विभिन्न व्यवस्थाएं की गयी। ईस्ट इंडिया कंपनी के नियंत्रणकाल में भारतीय तथा देशी रियासतों से संबंधित विषय सपरिषद गर्वनर जनरल द्वारा ही निश्चित किये जाते थे। आगे चलकर देशी रियासतों के नियंत्रण के लिये पृथक व्यवस्था की आवश्यकता महसूस हुई, तद्नुसार 1858 में ब्रिटिश ताज की अधीनता में भारत के शासन के आ जाने के उपरांत देशी रियासतों के लिये पृथक विदेश विभाग की स्थापना कर एक विदेश सचिव नियुक्त किया गया जो वायसराय के प्रति उत्तरदायी था। विभिन्न क्षेत्रों के रेसीडेण्ट और पोलिटिकल एजेण्ट विदेश सचिव के नियंत्रण में कार्य करते थे।[53]

सन् 1915 में रियासती विभाग से संबंधित कार्यो के संपादन हेतु राजनीतिक सचिव नामक अधिकारी नियुक्त किया गया। यह अधिकारी वायसराय के प्रति उत्तरदायी था। देशी रियासते और भारत सरकार के विदेश एवं राजनीतिक विभाग के मध्य होने के वाले पत्र-व्यवहार इस अधिकारी के नाम से होते थे।[54]

कालांतर में माण्टेग्यू - चेम्सफोर्ड रिपोर्ट के आधार पर पहले जिन रियासतों का नियंत्रण प्राय: प्रांतीय सरकारों से था बाद में उनमें से अधिकांश का संबंध सीधा गर्वनर जनरल से कर दिया गया, परन्तु उनका नियंत्रण एक

एजेंट के माध्यम से ही होता था। भारत सरकार का पोलिटिकल डिपार्टमेंट भारत की समस्त रियासतों के शासन के लिये उत्तरदायी था। वह सीधा वायसराय के मातहत काम करता था , जिसमें पोलिटिकल सेक्रेटरी एजेंट टू गवर्नर जनरल, रेसीडेण्ट आदि अधिकारी होते थे। इन तमाम अधिकारियों को बहुत व्यापक और अलग-अलग अधिकार दिये गये थे , जिनका कहीं कोई खुलासा नहीं किया गया था। यह रियासत के महत्व, नरेश का स्वभाव, और पोलिटिकल अधिकारी की मर्जी पर निर्भर करता था। आम तौर पर छोटी रियासतों पर इनका व्यापक अधिकार होता था पर सबसे आश्चर्य की बात तो यह है, कि कोई नहीं जानता था कि ये अधिकार क्या है ? सारा काम बड़ी गोपनीयता से होता था ,जिसके कारण नरेशों पर इस महकमें का भंयकर आंतक रहता था। [55]

स्पष्ट है कि देशी रियासतों पर ब्रिटिश सरकार का शिकंजा कसता गया तथा अनेक स्तरीय नियंत्रण स्थापित होता गया। जहां तक प्रश्न सारंगढ़ रियासत का था, उसे सन्1865 में ब्रिटिश सरकार के द्वारा सामंती रियासत (फ्यूडेटरी स्टेट) का दर्जा प्रदान किया गया था, तथापि इन परिवर्तनों से सारंगढ़ रियासत की राजनैतिक स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया। ईस्ट इंडिया कंपनी के शासनकाल में ही कंपनी द्वारा प्रदत्त सनद् द्वारा सारंगढ़ रियासत के प्रशासन पर ब्रिटिश नियंत्रण स्थापित हो चुकी थी , जो कभी संबलपुर के डिप्टी कमिश्नर तो कभी-पोलिटिकल एजेंट फ्यूडेटरी स्टेट्स तथा कभी ईस्टर्न स्टेट्स एजेंसी के माध्यम से प्रदर्शित होता रहा। ये अधिकारीगण रियासती प्रशासन में प्रत्यक्ष नियंत्रण रखते थे तथा रियासत के शासक इनके प्रभाव में होते थे, यद्यपि इन अधिकारियों के अधिकार क्षेत्र निश्चित नहीं थे, किन्तु फिर भी सारंगढ़ रियासत में इनका नियंत्रण अक्षुण्ण एवं अंतिम था।

बहरहाल यह स्थिति काफी लम्बे समय तक जारी नहीं रही। सन्1935 के भारत शासन अधिनियम द्वारा देशी रियासतों का भारतीय संघ में विलनीकरण का प्रयास किया गया जो सफल न हो सका। अंतत: शिमला समझौते के द्वारा स्थापित अंतरिम सरकार ने 25 जून 1947 को रियासतों से संबंध रखने के लिये सरदार पटेल के अधीन एक स्टेट्स डिपार्टमेण्ट स्थापित किया, जिसके अंतर्गत विभिन्न क्षेत्रीय अधिकारियों की नियुक्ति की गयी। छत्तीसगढ़ के रियासतों के लिये संबलपुर में एक क्षेत्रीय आयुक्त तथा रायपुर में क्षेत्रीय उपायुक्त नियुक्त किये गये। भारतीय संघ में रियासतों के विलय का कार्य इसी विभाग के द्वारा संपादित किया गया। [56]

3.2 ब्रिटिश नीति :

जैसा कि पूर्व में ही उल्लेख किया जा चुका है कि सन् 1818 ई. में तृतीय मराठा युद्ध की समाप्ति के पश्चात् भारत में ब्रिटिश सत्ता की जडे तेजी के साथ फैलने लगी और मराठा तथा राजपूत राज्यों के साथ ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की संधियों का दौर प्रारंभ हुआ। ब्रिटिश सत्ता के तीव्र प्रसार की इस प्रक्रिया के तहत भारत की अनेक देशी रियासते भी संधियों या सनदों के माध्यम से उनकी अधीनता में आने विवश हो गई।

इन समस्त देशी रियासतो के प्रति ब्रिटिश सार्वभौम सत्ता का संबंध एक जैसा नहीं था, अपितु ऐतिहासिक तथा अन्य कारणों से इनमें बहुत सी भिन्नताएं थी। छत्तीसगढ़ की अन्य देशी रियासतों की तरह सारंगढ़ रियासत उनमें से थी जिनके अधिकार ब्रिटिश सार्वभौम सत्ता को प्रस्तुत इकरारनामें तथा ब्रिटिश सत्ता द्वारा प्रदत्त सनदों तथा आदेश

पत्रों पर आधारित थे।[57]

देशी रियासतों के प्रति ब्रिटिश नीति भी सदैव एक सी नहीं रही वरन् इसमें समय -समय पर अनेकानेक परिवर्तन होते रहे। प्रारंभ में ब्रिटिश नीति निश्चत क्षेत्रों और विषयों को छोड़कर रियासतों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न किये जाने की रही, पश्चात् लार्ड हेस्टिंग्ज की सलाह पर रियासतों को मातहत के तौर पर रखा गया तथा उन्हें शेष भारत से सावधानी पूर्वक अलग रखने का प्रयास किया गया।[58] इस प्रकार भारतीय रियासतों के प्रति अंग्रेजी व्यापारिक कंपनी का संबंध भारतीय रियासतों की सर्वोपरि शक्ति के रुप में स्थापित हो गया।[59] अत: रियासतों पर नियंत्रण और हस्तक्षेप बढ़ता चला गया।

जनवरी 1848 में लार्ड डलहौजी भारत का गर्वनर जनरल बनकर आया और 1856 तक वह इस पद पर रहा। वह घोर साम्राज्यवादी था तथा अपने आठ वर्षो के शासनकाल में अग्रगामी नीति का उसने अनुसरण किया। ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार उसका मुख्य उद्देश्य था। भारतीय नरेशों और नवाबों से उसे घृणा थी। छितरे हुये और अव्यवस्थित भारत से उसे चिढ़ थी। वह एक सुसंगठित और आधुनिक भारत का निर्माण करना चाहता था। उसने अपनी समस्त शक्तियाँ इस लक्ष्य को पूर्ती में लगा दी। उसे साधनों के औचित्य में विश्वास न था, किसी भी साधन का उपयोग करने में उसे संकोच नहीं हुआ तथा उसने अनेक राज्यों का अपहरण कर कंपनी के साम्राज्य में वृद्धि की।[60]

नागपुर का भोंसला राज्य भी डलहौजी की इसी हड़प नीति का शिकार हुआ। 11 दिसंबर सन्1853 को नागपुर के अंतिम राजा रघुजी तृतीय की मृत्यु हो गई। इस समय तक उसने कोई भी बच्चा गोद नहीं लिया था। अत: विलय के सिद्धांत के आधार पर डलहौजी ने नागपुर राज्य को अंग्रेजी साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया। यद्यपि राजा की मृत्यु पश्चात् ब्रिटिश रेसीडेण्ट मि. मेंसल ने 11 दिसंबर 1853 की शाम 6 बजे ही राज्य का प्रशासन अपने हाथों में ले लिया तथापि राज्य को ब्रिटिश साम्राज्य में शामिल करने की विधिवत घोषणा 13 मार्च 1854 को की गई।[61]

चूंकि छत्तीसगढ़ का क्षेत्र उस समय नागपुर राज्य का एक अविभाज्य अंग था, अत: स्वाभाविक रुप से सारंगढ़ रियासत सहित संबलपुर के गढ़जात राज्यों और छत्तीसगढ़ के अनेक राज्यों पर दीर्घकाल तक प्रभुत्व एवं नियंत्रण रखने वाले भोसला राज्य का सूर्य अस्त हो गया तथा सन् 1854 से यह क्षेत्र अंग्रेजों के पूर्ण नियंत्रण में आ गया।

यहां यह स्पष्ट करना आवश्यक हैं ,कि छत्तीसगढ़ में मराठा प्रभुत्व स्थापित होने के पश्चात् कुछ ही समय तक सारंगढ़ रियासत भोंसलों की अधीनता में रही तथा सन् 1818 ई. में भोसले और कंपनी के बीच हुई संधि के अनुसार सारंगढ़ रियासत कंपनी की अधीनता में आ गया, इस प्रकार सन्1818 से ही सारंगढ़ रियासत ब्रिटिश प्रभाव में आ चुकी थी , फिर भी 1854 में नागपुर राज्य के विलय के पश्चात् ही छत्तीसगढ़ तथा संबलपुर की अन्यान्य रियासतों के समान सारंगढ़ रियासत पर अंग्रेजों का पूर्ण नियंत्रण हो सका।

सन् 1854 में परिवर्तित इन परिस्थितियों से इस क्षेत्र के राज्यों के साथ ब्रिटिश सरकार के संबंध तथा इनके प्रति नीति भी प्रभावित हुई। सन् 1858 में कंपनी शासन की समाप्ति और देशी रियासतों के ब्रिटिश ताज की अधीनता में आने के बाद ब्रिटिश नीति में पुन: परिवर्तन हुआ, किन्तु महारानी की घोषणा के विपरीत रियासतों पर ब्रिटिश नियंत्रण क्रमिक रुप से मजबूत होता चला गया। [62] यद्यपि लार्ड मिण्टो ने अपने कार्यकाल में इन रियासतों पर सरकारी नियंत्रण कम करने के संबंध में विचार प्रकट किये थे, [63] तथा माण्टफोर्ड प्रतिवेदन में देशी रियासतों को कुछ हद तक अर्धसम्प्रभु मान लिया गया था। [64] तथापि देशी रियासतों की संवैधानिक स्थिति के अध्ययन के लिये नियुक्त बटलर समिति ने उनकी स्थिति को और भी अधिक सीमित कर दिया । इस प्रतिवेदन के अनुसार रियासतों के हित के लिये, शासकों के हित के लिये, शांति और व्यवस्था की स्थापना के लिये ब्रिटिश सत्ता रियासतों के क्षेत्राधिकार में पर्याप्त हस्तक्षेप कर सकती थी। [65]

किन्तु कालांतर में रियासतों तथा सार्वभौम सत्ता के बीच कुछ इस तरह का संबंध बना कि दोनों मिलकर सहयोग पूर्वक आगे बढ़े। यह बात ध्यान देने लायक है, कि पहिले जब तक भारतीय जनजागृति ने काफी बल ग्रहण नहीं किया था, ब्रिटिश सरकार भारतीय नरेशों को अत्यंत संदेह की दृष्टि से देखती थी, उन पर कड़ी निगरानी थी। उनका आपस में मिलना जुलना तक बगैर पोलिटिकल डिपार्टमेंट की स्वीकृति के मुश्किल था। पर जब हवा बदलने लगी तब सन् 1921 में नरेन्द्र मंडल की बुनियाद ब्रिटिश सरकार द्वारा ही डाली गई। 8 फरवरी 1921 के शाही फरमान द्वारा सम्राट ने नरेन्द्र मंडल की स्थापना की थी। [66]

रियासतों के सामूहिक हितो को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से यह संस्था भारत सरकार के राजकीय विभाग से सीधे संपर्क कर रियासतो से संबंधित विभिन्न मसलों पर विचार करती थी। इस प्रकार नरेन्द्र मंडल का निर्माण और उसकी स्थायी समिति की स्थापना एक जर्बदस्त घटना कही जा सकती है, क्योंकि इसमें सरकार ने रियासतो को एक दूसरे से अलग रखने की नीति का त्याग कर उनके परस्पर सहयोग और सौहार्द्रता की इच्छा प्रकट की थी। ब्रिटिश भारत की जनजागृति के मुकाबले में नरेन्द्र मंडल का उपयोग करना ब्रिटिश सरकार के लिये अधिक लाभदायक था।

आने वाले समय में देशी रियासतों और ब्रिटिश भारत के मध्य निरंतर बढ़ने वाले संपर्क ने देश में संगठन तथा एकता का मार्ग प्रशस्त किया। परिणाम स्वरुप ब्रिटिश सरकार जो पहले विकेन्द्रीय करण की नीति अपना रही थी, अब देशी रियासतों और ब्रिटिश प्रांतों के लिये एक अखिल भारतीय संघ के निर्माण के विषय में विचार करने लगी तथा साइमन कमीशन, गोलमेज परिषदे, और 1935 के भारत शासन अधिनियम में भारत के लिये संघ शासन की स्थापना का लक्ष्य रखा गया।[67]

यद्यपि 1935 के अधिनियम में प्रस्तावित संघीय शासन की स्थापना भारत में नहीं की जा सकी, परन्तु आने वाले वर्षो में देशी रियासतों को भारतीय संघ में सम्मिलित करने हेतु अनेक प्रयास हुये। क्रिप्स मिशन तथा कैबिनेट मिशन के प्रस्तावों में संघ शासन की स्थापना का लक्ष्य रखा गया था। संभवत: देशी रियासतों के संघ में सम्मिलित न होने के पीछे उनमें अपनी संप्रभुता को भारतीय संघ में विलीन करने के भय की भावना थी, जो कभी इनके पास वास्तविक रुप से नहीं थी। [68] किन्तु इसके बावजूद यह कहा जा सकता है, कि संघवाद की इस अवधारणा

में भविष्य में भारतीय संघ में देशी रियासतों के विलंय का मार्ग प्रशस्त किया था।

इस प्रकार देशी रिय सतों के प्रति ब्रिटिश नीति के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है, कि समय के प्रवाह के साथ-साथ इसमें परिवर्तन होते रहे। जहां एक ओर प्रारंभ में ब्रिटिश नीति रियासतों के साथ बराबरी के संबंध स्थापित करने की रही वही दूसरी ओर ब्रिटिश शक्ति के परिणामस्वरुप रियासतों में हस्तक्षेप कर उन्हें अपना अधीनस्थ बनाना भी ब्रिटिश नीति का मुख्य उद्देश्य था। व्यापार एवं उद्योग की संभावनाओं को देखते हुये अंग्रेजों ने रियासतों के प्रति उदार नीति भी अपनायी ,जिसके फलस्वरुप रियासतों में अनेक प्रशासकीय तथा संवैधानिक सुधार कार्यान्वित किये जा सके।

3.3. सारंगढ़ रियासत : सामंती रियासत के रुप में -

सारंगढ़ रियासत को सन् 1865 तक जमीदारी या करद राज्य के रुप में ही मान्यता प्राप्त थी। किन्तु जैसा कि पूर्व में उल्लेखित किया जा चुका है, कि सन् 1857 के विद्रोह के दौरान अंग्रेजों ने ब्रिटिश शासन के हित में देशी रियासतों के अस्तित्व की उपयोगिता का अनुभव किया, और भविष्य में आपत्तिकाल में ब्रिटिश शासन का साथ देने की दृष्टि से पुरानी , बड़ी और शक्तिशाली जमीदारियों या करद राज्यों को सांमती रियासत तथा वहां के शासक को सामंत शासक का दर्जा देने का निर्णय लिया गया। फलस्वरुप मध्यप्रांत में सारंगढ़ सहित पन्द्रह सामंती रियासतो (फ्यूडेटरी स्टेट्स) का प्रादुर्भाव हुआ।[69]

सारंगढ़ रियासत को सामंती रियासत के रुप में मान्यता 20 मई 1865 को प्राप्त हुई [70] किन्तु रियासत के शासक राजा संग्राम सिंह को सांमत शासक (फ्यूडेटरी चीफ) की सनद 4 जनवरी 1866 को मध्य प्रांत के तत्कालीन चीफ कमिश्नर रिचर्ड टेम्पल द्वारा नागपुर दरबार में प्रदान की गई।[71] इसी दिन इन्हें गोद लेने के विषय में यह अधिकार प्रदान किया गया कि संतान के अभाव में वह गोद लेना स्वीकृत होगा जो सामाजिक नियम तथा हिन्दू धर्मशास्त के दत्त विधान के अनुकूल हो। सनद् प्रदान करने से पूर्व इनसे इकरारनामें लिया गया था।[72] ब्रिटिश सरकार को दिये इकरारनामे में यह स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया था कि यदि किसी भी समय उनके या उनके उत्तराधिकारियों के कदाचरण से रियासत में कुव्यवस्था उत्पन्न होगी तब वे या उनके उत्तराधिकारी शासनाधिकार से निलंबित या पृथक किये जा सकेंगे।[73]

तत्पश्चात् 4 सितंबर 1867 को सारंगढ़ रियासत के शासक संग्रामसिंह को जे. एच. मॉरिस ऑफिसिएटिंग चीफ कमिश्नर नागपुर के द्वारा पुन: एक सनद् प्रदान किया गया, अधिकारों की निरंतरता बनी रहने के लिये निम्नलिखित शर्तें उल्लिखित थी -[74]

तुम प्रारंभ में संबलपुर गढ़जात राज्य के एक करद शासक थे। गर्वनर जनरल सपरिषद सहर्ष तुम्हें सामंत शासक के रुप में मान्यता प्रदान करते हुये तुम्हारे राज्य की सीमा में फौजदारी, दीवानी अथवा राजस्व संबंधी विषयों में पूर्ण अधिकार निम्नानुसार प्रतिबंधों के साथ प्रदान करते है, कि किसी अभियोगी को मृत्यु दंड के किसी दंडादेश

के निष्पादन के पूर्व तुम्हें कमिश्नर छत्तीसगढ़ संभाग या ब्रिटिश सरकार द्वारा नाम निर्दिष्ट किसी भी अधिकारी द्वारा इसकी पुष्टि आवश्यक रुप से करानी होगी।

सामंत शासक के रुप में तुम्हारी मान्यता अग्रलिखित शर्तो को पूरा करने पर रहेगी तथा इनमें से किसी का भी उल्लंघन होने अथवा पूर्ति करने में असफल होने पर तुम्हारे सामंत शासक के रुप मे दिये गये अधिकार समाप्त किये जा सकेगें।

(1) कि, तुम 20 वर्षो के लिये निर्धारित टकोली की राशि 1350/- रु. वार्षिक वर्तमान वर्ष 1867 से 1887 तक नियमित रुप से अदा करते रहोगे। निर्धारित टकोली की राशि का पुनरीक्षण निर्धारित अवधि की समाप्ति पश्चात् अथवा जब कभी भी सरकार उचित समझे किया जावेगा।

(2) ब्रिटिश या अन्य रियासती क्षेत्र के अभियोगियों के तुम्हारें रियासती क्षेत्र में शरण पाने या लेने की दशा में उन्हें पकड़कर ब्रिटिश अधिकारियों को सौंपना होगा तथा अभियोगी की गिरफ्तारी के लिये आये हुये ब्रिटिश अधिकारियों को आवश्यक सहयोग पहुंचाना होगा एवं तुम्हारे रियासत के अभियोगियों द्वारा ब्रिटिश क्षेत्र अथवा दूसरी रियासती क्षेत्र में शरण लेने की घटना की सूचना हेतु तुम उपर्युक्त अधिकारी के समक्ष मामले को विचारार्थ प्रस्तुत करोगे।

(3) तुम अपने रियासती क्षेत्र में प्रत्येक प्रकार के अपराधों को समाप्त करने की दिशा में उच्चतम प्रयास करोगे।

(4) तुम सभी व्यक्तियों को स्वच्छ एवं निष्पक्ष न्याय प्रदान करोगें।

(5) तुम अपनी प्रजा के अधिकारों को मान्यता प्रदान करोगें, उनकी समुचित रक्षा करोगे तथा किसी भी परिस्थिति मेंउन पर अत्याचार नहीं करोगे।

(6) तुम अपनी रियासत से होकर गुजरने वाले अनाज या अन्य व्यापारिक वस्तुओं पर किसी प्रकार का कर या शुल्क वसूल नहीं करोगे।

(7) तुम कमिश्नर छत्तीसगढ़ संभाग, डिप्टी कमिश्नर संबलपुर अथवा चीफ कमिश्नर द्वारा प्राधिकृत अधिकारी के परामर्श या निर्देशों का पालन करोगे।

(8)तुम संबलपुर के सदर मुख्यालय में एक अनुमोदित वकील की नियुक्ति करोगे, ताकि तुम्हारी रियासत से सदर्भित सभी आदेश इसके माध्यम से तुम्हें प्रेषित की जा सके।

(9) तुम अपने रियासत में आबकारी राजस्व की इस ढंग से व्यवस्था करोगे कि वह समीपवर्ती ब्रिटिश क्षेत्रो के लिये आपत्तिजनक न हो और यदि तुम्हारी आबकारी व्यवस्था आपत्तिजनक होगी तो चीफ कमिश्नर को तुम्हारे कर (टकोली) में 1000/ रु. वार्षिक की वृद्धि करने का अधिकार तब तक होगा जब तक कि तुम्हारी आबकारी व्यवस्था पुन: संतोषप्रद नहीं हो जाती।

उपर्युक्त शर्तो के पालन न करने की दशा मे ब्रिटिश सरकार शासक को शासनाधिकार से पृथक कर सकती

थी या उसकी शक्तियों पर प्रतिबंध लगा सकती थी। [75]

इस सनद् की प्राप्ति पश्चात 26 फरवरी 1937 को सारंगढ़ रियासत के राजा जवाहिर सिंह को 4500/- रुपये वार्षिक टकोली की राशि अदायगी की शर्त पर वायसराय द्वारा नई सनद् प्रदान की गई। उपरोक्त सनद् में पूर्व सनद में उल्लिखित शर्तों के अतिरिक्त यह भी उल्लेख था कि जब तक वे ब्रिटिश राज के प्रति वफादार बने रहेंगे तब तक ब्रिटिश सरकार द्वारा इनके शासनाधिकार एवं सुविधाएं जिनका वे उपयोग करते आ रहे हैं बनी रहेंगी तथा उन्हें अपने क्षेत्र में शासन करने का अधिकार होगा तथा कालांतर में निर्धारित शर्तों के पूरा करने की स्थिति में उनके उत्तराधिकारी इस हेतु पात्र होगे। [76]

इस प्रकार इन सनदों के माध्यम से सारंगढ़ रियासत के शासकों ने अपने समस्त शासनाधिकार तथा संप्रभुता ब्रिटिश ताज के पास गिरवी रख दी। शासक तथा उनके उत्तराधिकारी केवल ब्रिटिश शर्तों को पूरा करके ही अपने पद पर आसीन रह सकते थे। रियासत में अब शासक नाम मात्र के प्रमुख रह गये। जबकि समूची व्यवस्था ब्रिटिश सत्ता के हाथों में चली गई। शासक का अस्तित्व केवल ब्रिटिश ताज के प्रति वफादारी तक सीमित रह गया था।

शासक स्वयं कहते थे कि वे सरकार से हमेशा डरते रहते थे, क्योंकि उनकी प्रभुसत्ता तो ब्रिटिश सरकार की कृपा पर ही आधारित रह गई थी। अतः उन्हें कभी भी हटाया जा सकता था इसलिए कहा जा सकता है कि शासक तो विद्यमान थे, परन्तु सत्ता अंर्तध्यान हो गई थी। [77]

राजाओं को सनद प्रदान की जाती थी, इन्हें सनदों के द्वारा राज्य पर अधिकार रखने की स्वीकृति, विभिन्न प्रशासनीय एवं न्यायकि अधिकार प्रदान किये जाते थे। वे सनदे स्थाई नहीं होती थी, अपितु समय- समय पर इनका नवीनीकरण कराना आवश्यक होता था। इस नवीनीकरण की प्रक्रिया में सरकार एक तीर से दो शिकार करती थी अर्थात राजा को कृतकृत्य करना तथा टकौली राशि में वृद्धि करना। [78]

यह उल्लेखनीय है कि ब्रिटिश सरकार द्वारा सारंगढ़ रियासत सहित छत्तीसगढ़ की अन्य रियासतों के शासकों को जो सनदें प्रदान की गई तथा इकरारनामें लिये गये थे उनमें ब्रिटिश सत्ता द्वारा छत्तीसगढ़ की समस्त रियासतों को एक ही राजनैतिक इकाई के रूप में उपकृत किया गया था, फिर भी समस्त रियासतें आपस में एक दूसरे से पूर्णतः स्वतंत्र थी , जबकि अंग्रेजों के आगमन के पूर्व हैहयवंशीय अथवा मराठा शासकों के अधीन रहते हुए सारगढ रियासत अपने से बड़ी रियासत उदाहरणार्थ पटना अथवा संबलपुर की अधीनता स्वीकार करती थी। [79]

यहां यह स्पष्ट करना आवश्यक होगा कि सारंगढ़ सहित छत्तीसगढ़ की रियासतों पर पृथक रूप से केवल ब्रिटिश सरकार का नियंत्रण इनके आंतरिक मामलों तक अथवा प्रशासन व्यवस्था संचालित करने एवं नीतियां निर्धारित करने तक ही सीमित नहीं था अपितु इस व्यवस्था के अंतर्गत दो या उससे अधिक रियासतों के मध्य उत्पन्न किसी भी प्रकार के विवाद का निपटारा संबंधित शासक आपस में नहीं कर सकते थे , अब इन्हें ब्रिटिश सरकार के समक्ष प्रस्तुत करना आवश्यक होता था। [80] सारंगढ़ रियासत की सीमा से लगी चन्द्रपुर तथा फुलझर आदि जमींदारियों से रियासत की सीमा संबंधी विवाद का निपटारा डिप्टी कमिश्नर संबलपुर सन् 1866 में प्रतिनियुक्ति पर आये डिप्टी

कमिश्नर के द्वारा तय किये गये।[81]

सन 1867 में प्रदत्त सनद के अनुसार सारंगढ़ रियासत के शासक को न तो रियासत के आंतरिक प्रशासन में पूर्ण अधिकार प्राप्त थे और न ही राज प्रतिष्ठा के आधार पर इन्हें तोपों की सलामी ही प्राप्त थी और तो और शासक नरेश का दर्जा भी इन्हें प्राप्त नहीं था।[82] सन् 1921 के पश्चात इन्हें रूलिंग चीफ तथा सन् 1933 में रूलर का दर्जा प्राप्त हुआ। छत्तीसगढ़ की अन्य रियासतों के सदृश सारंगढ़ रियासत के पास न तो स्वयं के सिक्के थे और न ही सेना। ब्रिटिश सरकार के सिक्के ही यहां प्रचलित थे।[83]

रियासत का कोई अंतर्राष्ट्रीय महत्व भी नहीं था। सार्वभौम सत्ता की अनुमति के बिना रियासतें अपने प्रदेश में से कोई हिस्सा ले दे नहीं सकती थी, या बेच नहीं सकती थी। इनके आपसी झगड़ों को रोकने का अधिकार भी सार्वभौम सत्ता को ही था। आंतरिक उपद्रवों या बगावतों से इनकी रक्षा करने के लिये भी ब्रिटिश सार्वभौम सत्ता वचनबद्ध थी।[84] इस सुरक्षा तथा उन्हें प्रदत्त प्रशासनिक अधिकार और सुविधाओं की निरंतरता के लिए रियासत एक निश्चित धनराशि टकोली (कर) के रूप में ब्रिटिश सत्ता को अदा करती थी, जो प्रायः बीस वर्षों के लिए निर्धारित की जाती थी।[85]

सारंगढ़ रियासत के ब्रिटिश नियंत्रण में आने के पश्चात से लेकर ब्रिटिश प्रभाव की समाप्ति तक निम्नानुसार वार्षिक टकोली (कर) निर्धारित की गई, जिसका निर्धारित समय पर भुगतान सारंगढ़ रियासत द्वारा किया जाता रहा, जिसे उपरोक्त तालिका के माध्यम से प्रदर्शित किया जा रहा है।

सारंगढ़ रियासत : वार्षिक टकौली (कर)

टकौली निर्धारण का वर्ष	निर्धारित टकौली की राशि
1818[86]	1312 रू. सिक्का कलदार
1827[87]	1312 रू. सिक्का कलदार जो कालांतर में 1400 रू. सरकारी (कंपनी) में बदल दिये गये।
1866 तक[88]	1400 रू.
1867 का पुनरीक्षण[89]	1350 रू. (मौ. 50 रू. छोड़ दिये)
1887 का पुनरीक्षण[90]	3500 रू.
1908 का पुनरीक्षण[91] (30 वर्षों के लिए)	4500 रू.

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि सन् 1867 में सारंगढ़ रियासत के शासक को सामंत शासक के रूप में मान्यता जिन शर्तों के आधार पर ब्रिटिश सरकार ने दी थी इससे रियासत पूरी तरह ब्रिटिश सरकार के नियंत्रण में आ गया। प्रशासन के उनके अधिकार इस प्रकार सीमित और नियंत्रित कर दिये गये कि वे ब्रिटिश अधिकारियों की अनुमति या इच्छा के विपरीत कोई भी कार्य नहीं कर सकते थे। यहां तक कि उत्तराधिकारियों के चयन का अधिकार भी अब शासक के हाथों से जाता रहा। अस्तु, कहा जा सकता है कि सारंगढ़ रियासत के प्रशासन का ब्रिटिशीकरण हो गया।

नई सनदों तथा राजाओं द्वारा दिये गये इकरारनामें से रियासत के आंतरिक प्रशासन में ब्रिटिश प्रशासकों के हस्तक्षेप का अधिकार बहुत बढ़ गया। रियासतों में न सिर्फ प्रशासनिक कुव्यवस्था के नाम पर हस्तक्षेप किया गया अपितु कभी शासक की अल्पवयस्कता को लेकर कभी शासनाधिकार सौपने समय या कभी वित्तीय स्थिति को सुधारने के नाम पर हस्तक्षेप किया गया। [92]

सारंगढ़ रियासत के आंतरिक प्रशासन में ब्रिटिश शासन का नियंत्रण कितना अधिक था इसकी प्रतीति अग्रलिखित घटनाओं से होती है।

सारंगढ़ रियासत के राज्य प्रबंध पर एक लंबे अवधि तक ब्रिटिश नियंत्रण का कोहरा छाया रहा। राजा संग्राम सिंह के उत्तराधिकारी अल्पवयस्क राजा भवानी प्रताप सिंह की संरक्षक राजमाता बोधकुंवर देई तथा राजा के चचेरे भाई रघुवर सिंह द्वारा राज्य के प्रशासन का समुचित प्रबंध न किये जा सकने पर कुप्रबंध के आधार पर सन् 1878 में सारंगढ़ रियासत के प्रबंध को अस्थाई तौर पर अंग्रेजी शासन द्वारा अपने नियंत्रण में ले लिया गया तथा राज्य प्रबंध हेतु एक अधीक्षक की नियुक्ति की गई जो पोलिटिकल एजेन्ट रायपुर के नियंत्रण में कार्य करता था। [93] सन् 1885 में राजा भवानी प्रताप सिंह ने वयस्क होने पश्चात् सामंत शासक के अधिकार दिये जाने हेतु ब्रिटिश सरकार से प्रार्थना की किन्तु इसे शासन कर सकने में अनुपयुक्त बताकर उसकी प्रार्थना अस्वीकृत कर दी गई। इस प्रकार अपने सम्पूर्ण कार्यकाल में वह शासनाधिकार से वंचित रहा। [94]

सन् 1888 में राजा भवानी प्रताप सिंह की मृत्यु उपरांत सन 1889 में उसका चचेरा भाई रघुवर सिंह सारंगढ़ रियासत की गद्दी पर बैठा उसे ब्रिटिश सरकार द्वारा सामंत शासक के अधिकार शीघ्र दिया जाना प्रस्तावित था। [95] किन्तु पश्चात् यह निर्णय लिया गया कि रघुवर सिंह को सामंत शासक के अधिकार तब तक न दिये जाये जब तक कि वह राज्य के प्रबंध कार्य में अपनी योग्यता न प्रदर्शित कर दे। इस हेतु सन् 1889- 90 से सन् 1892-93 तक की अवधि में 37,500 रुपये जो रियासत के एक वर्ष के राजस्व के व्यवस्था नजराने के रूप में चार वार्षिक किश्तों में रघुवर सिंह को भुगतान किये जाने को कहा गया। [96] किन्तु उत्तराधिकार ग्रहण करने के एक वर्ष के भीतर ही 5 अगस्त सन 1890 को रघुवर सिंह का देहांत हो गया और उसका तीन वर्षीय अल्पवयस्क पुत्र लाल जवाहिरसिंह उसका उत्तराधिकारी बना। [97] सन 1878 से सारंगढ़ रियासत पर प्रारंभ हुए ब्रिटिश नियंत्रण के अंतर्गत राज्य प्रबंध इस राजा के अल्पवयस्क होने के कारण निरंतर बना रहा, जिस पर 3 नवंबर 1909 को जवाहिर सिंह के वयस्क हो

जाने पर उसे सामंत शासक के अधिकार सौंपे जाने के साथ ही विराम लग पाया।[98]

राजा जवाहिर सिंह के शासनकाल में राजा द्वारा बड़ी धनराशि का व्यय करके नया राजप्रसाद (गिरि विलास) का निर्माण, राजा के यूरोपीय ढंग के रहन - सहन का व्यय, शिकार के लिये अनेक अधिकारियों को प्रायः आमंत्रण और उन पर व्यय तथा राजा की अस्वस्थतावश उसके द्वारा हिल स्टेशन्स की यात्राओं आदि के व्यय के परिणामस्वरूप सारंगढ़ रियासत की वित्तीय स्थिति अत्यंत कमजोर हो गयी थी।[99] किन्तु राजा बहादुर जवाहिर सिंह के तीस वर्षों के दीर्घकालीन कार्यकाल, पड़ोसी राजाओं के द्वारा उसे दिये जाने वाले सम्मान, तथा पूर्व ब्रिटिश राजनीतिक अधिकारियों के साथ उ ाके संबंधों को दृष्टिगत रखते हुए यद्यपि उसकी वित्तीय शक्तियों पर नियंत्रण नहीं लगाया गया, तथापि उसे निर्देशित किया गया कि अपने व्ययों में बीस प्रतिशत कटौती करने का प्रयास करे तथा वित्तीय स्थिति के संतोषप्रद होने तक रियासत का वार्षिक बजट तथा वार्षिक प्रशासनिक प्रतिवेदन पोलिटिकल एजेन्ट रायपुर के माध्यम से ब्रिटिश सरकार को प्रेषित करें। उपर्युक्त सुझावों तथा निर्देशों के अनुसार कार्य कर रियासत की वित्तीय स्थिति को सुधारने का प्रयास न करने पर इस दिशा में कठोर कार्यवाही किये जाने की चेतावनी उसे दी गयी।[100]

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि सारंगढ़ रियासत के आंतरिक प्रशासन में ब्रिटिश सरकार द्वारा पर्याप्त हस्तक्षेप किया गया। सारंगढ़ रियासत सन् 1909 तक 31 वर्षों की लंबी अवधि तक ब्रिटिश नियंत्रण के अंतर्गत रही। इस अवधि में रियासती शासक तथा उनके दीवानों की प्रशासनिक न्यायिक तथा अन्य शक्तियों का प्रयोग पोलिटिकल एजेन्ट रायपुर तथा ब्रिटिश सरकार द्वारा नियुक्त प्रशासनिक अधिकरियों के द्वारा किया गया।[101] इतना ही नहीं ब्रिटिश शासन की ओर से राजा बहादुर जवाहिर सिंह को वित्तीय नियंत्रण हेतु कड़े शब्दों में समझाईस तथा कार्यवाही संबंधित चेतावनी दी गई।

सारांश रूप में कहा जा सकता है कि सारंगढ़ रियासत के शासकों को ब्रिटिश सरकार से प्राप्त शक्तियां प्रत्येक क्षेत्र में नियंत्रित तथा बाधित थी। ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा किसी भी समय किसी भी क्षेत्र में हस्तक्षेप किया जा सकता था। प्रायः शासनाधिकार प्राप्त करते समय शासक को ब्रिटिश सरकार द्वारा मनोनीत व्यक्ति को ही अपना दीवान नियुक्त करना पड़ता था। ऐसी परिस्थिति में दीवान व्यवहारतः रियासती शासक के आदेशों को मानने के लिए कटिबद्ध नहीं रहते थे , बल्कि शासक ही इनके परामर्श को मानने के लिए बाध्य होते थे। ब्रिटिश रेसीडेन्ट और पोलिटिकल एजेन्ट रायपुर भी रियासत के आंतरिक प्रशासन में शक्तियों का प्रयोग कर हस्तक्षेप करते रहते थे। वास्तव में वे ही रियासतों के वास्तविक शासक तथा नरेशों के स्वामी थे। ब्रिटिश सरकार की शक्ति के समक्ष सारंगढ़ रियासत के शासक अत्यंत अशक्त और कमजोर थे तथा ब्रिटिश प्रशासकों के सुझावों और आदेशों को मानने के लिये विवश थे। किन्तु हमें यह स्वीकार करना ही होगा कि सारंगढ़ रियासत पर ब्रिटिश नियंत्रण और हस्तक्षेप के परिणामस्वरूप रियासती प्रशासन में सुधार हुआ। ब्रिटिश प्रशासको के योगदान से संवैधानिक क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई। वित्तीय नियंत्रण हेतु समझाईस से वित्तीय स्थिति में सुधार के साथ ही अपव्यय पर रोक लगी। इन्हीं सबका मिला जुला परिणाम कहा जा सकता है कि सारंगढ़ रियासत की जनता में राजनैतिक चेतना का क्रमिक विकास होता

गया , जो कि कालांतर में स्वाधीनता आंदोलन में इनकी सहभागिता तथा रियासत के विलनीकरण आंदोलन के रूप में प्रस्फुटित हुआ।

3.4 सारंगढ़ रियासत में जन जागृतिः

सारंगढ़ रियासत छत्तीसगढ़ की अन्यान्य रियासतों की तरह प्रत्येक दृष्टि से पिछड़ी हुई थी , अतः रियासती जनता एक लंबे समय तक ब्रिटिश सरकार और शासक के दोहरे शासन के मध्य पिसती रही। सन् 1857 की क्रांति के समय सारंगढ़ रियासत के राजा संग्राम सिंह अंग्रेजों के पक्ष में थे तथा उन्होंने संबलपुर के विद्रोही सुरेन्द्रसाय तथा कमल सिंह को पकड़ने तथा विद्रोह का दमन करने में ब्रिटिश सरकार को सहयोग प्रदान किया था। [102] इस तरह सन् 1857 तक इस क्षेत्र में जन जागृति का सर्वथा अभाव दिखाई देता है।

यद्यपि सारंगढ़ रियासत में स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान किसी बड़े या व्यापक आंदोलन की जानकारी हमें नहीं मिलती है, किन्तु ब्रिटिश शासन के बढ़ते प्रभाव के कारण शनैः शनैः इस क्षेत्र में जन जागृति आने लगी तथा छिटपुट प्रतिरोधों की जानकारी मिलती है।

देश भर में प्रजामंडलों की स्थापना से सारंगढ़ रियासत अछूता नहीं रहा। सारंगढ़ की जनता राजा जवाहिर सिंह से उत्तरदायी शासन की मांग कर रही थी । यद्यपि राजा जवाहिर सिंह छत्तीसगढ़ की अन्य रियासतों की अपेक्षाकृत उदार शासक थे। सन् 1917 में वे प्रांतीय विधानसभा में छत्तीसगढ़ के प्रतिनिधि रह चुके थे, परन्तु जहां तक उत्तरदायित्व पूर्ण शासन की स्थापना का सवाल था यह राजशाही के ऊपर कुछ आघात थी। [103]

सन् 1920 में महात्मा गांधी ने असहयोग आंदोलन चलाया। इससे प्रेरित होकर लकुराम गुप्ता के नेतृत्व में हड़ताल हुई । [104] सन् 1930 के नमक सत्याग्रह और गांधी जी की दाण्डी यात्रा का भी इस क्षेत्र में प्रभाव पड़ा, तथापि यह आंदोलन आरंभिक रुप में शिक्षित वर्ग तक सीमित रहा और बाद में कृषकों में भी फैल गया। [105]

सन् 1939 में कौंसिल ऑफ एक्शन से सभापति ठाकुर प्यारेलाल सिंह ने सारंगढ़ नरेश को लिखे गये अपने पत्र में राजा बहादुर का ध्यान प्रजा भी दयनीयता, मालगुजारों के द्वारा बढ़ाई गई करों का बोझ, कृषकों के मवेशियों की नीलामी, आदि समस्याओं की ओर उनका ध्यान आकृष्ट किया। अब तक सारंगढ़ रियासत में स्वराज्य संघ व खादी आश्रमों की स्थापना का कार्य तेजी पर था। [106]

यद्यपि रियासत में वनों का बाहुल्य था, तथापि कृषकों की निस्तार सुविधाएं अत्यंत सीमित एवं अपर्याप्त थी। सारंगढ़ रियासत में जनता से लिये जाने वाले चरी नामक कर के विरोध में परसाडीह के गौरिया दानीराम पटेल ने सन् 1941 में जंगल सत्याग्रह किया था तथा वारलोन के लिये जनता से लिये जाने लगे, चंदे के संबंध में निर्णय करने के लिये एक बडी सभा आयोजित की। यद्यपि प्रारंभ में उन्हें रजिस्ट्रेशन ऑफ एसोसिएशन एक्ट के अंतर्गत गिरफ्तार कर लिया गया तथापि अंत में वे अपने उद्देश्य में सफल रहे। [107]

सचार साधनों से अवरुद्ध सारंगढ़ रियासत में राजनैतिक सरगर्मी अपेक्षाकृत कम अवश्य थी, किन्तु

जनजागृति और राजनैतिक चेतना यहां भी विकसित हो चुकी थी तथा जन नेताओं ने रियासती शासन के विरुद्ध संघर्ष का शंखनाद कर दिया था।

सन् 1936 के प्रांतीय सभा के चुनाव में कांग्रेस ने अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की, लोगों को इससे काफी बल मिला। सन् 1839 में सारंगढ़ रियासत में उत्तरदायी शासन की मांग और तीव्र हुई, दूसरी ओर सारंगढ़ के राजा ने यह समझ लिया था कि अब अंग्रेजों का शासन अधिक दिनों तक चलने वाला नहीं है, फिर भी पूर्णशक्ति से ईस्टर्न स्टेट्स यूनियन के सक्रिय सदस्य के नाते राजा जवाहिर सिंह जन आंदोलन का प्रतिकार करते रहे। [108]

26 जून 1946 को गठित प्रगति शील नागरिक संघ आगे चलकर स्टेट कांग्रेस के रुप में परिवर्तित हो गया।[109] स्टेट कांग्रेस एक शक्तिशाली राजनैतिक दल के रुप में उभरी तथा जनता का नेतृत्व करते हुये रियासती शासन का उसने जबंदस्त विरोध किया। स्वाधीनता आंदोलन तथा रियासत के विलनीकरण आंदोलन में स्टेट कांग्रेस सारंगढ़ ने अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। [110] सारंगढ़ स्टेट कांग्रेस का नेतृत्व अध्यक्ष की हैसियत से दानीराम पटेल जैसे जुझारु व्यक्तित्व के हाथों में था।[111]

सारंगढ़ रियासत शासन के विरुद्ध जन नेताओं ने अंत तक संघर्ष किया। श्री दानीराम पटेल बापू के पास वर्धा में 8-10 दिनों तक रहे और उनका मार्गदर्शन प्राप्त किया। रियासत के विरुद्ध आपने बगावत की आग सुलगाई। श्री विष्णु दयाल चंद्रा को रियासत ने लंबे अर्से तक जेल में रखा। श्री केशव चन्द्र साहा ने सन् 1942 केआंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाई। श्री घनसाय वर्मा, श्री ठाकुरराम पटेल, स्व .श्री लक्ष्मण प्रसाद शर्मा, नान्दूदाई आदि ने जनता को जागृत करने में उल्लेखनीय योगदान दिया।[112] उनके संघर्ष के परिणामस्वरुप सारंगढ़ नरेश ने दिनांक 5 फरवरी 1939 को रियासत में ली जाने वाली बेगार की समाप्ति की घोषणा की [113] तथा नवंबर 1946 में जनता के अधिकारों की घोषणा की गयी।[114]

सारंगढ़ के रियासती शासन में व्याप्त बुराईयों के संबंध में कर्मवीर, शुभचिंतक तथा अन्य समाचार-पत्रों में प्रकाशन होने लगा। समाचार प्रेषित करने वाले संवाददाताओं ने एक भेदिया, जनता का जासूस,करुमुहु (कड़वा मुँह), चड्ढा गुल खैरु आदि छदम नामों का सहारा लिया। [115] इसलिये वे दरबार के कोप से बचे रहे और रियासती शासन की बुराईयों को उजागर करने तथा जनता को जागृत करने में उन्हें सफलता मिली।

रियासत के नेताओं ने शासन के दमनचक्र केविरुद्ध डटकर लोहा लिया और जनता में राजनीतिक चेतना जगाई। अंततः अन्याय, कानून और शक्ति का दुरुपयोग थम गया। [116]

लंबे संघर्ष पश्चात् 15 अगस्त 1947 का वह ऐतिहासिक दिन आया जब देश को आजादी मिली और अंग्रेजी शासन का अंत हो गया। सारंगढ़ रियासत में स्वाधीनता दिवस उत्साहपूर्वक मनाया गया। स्वाधीनता से पड़ोसी राज्यों को प्रजातांत्रिक शासन मिला, किन्तु देशी रियासतों की जनता उससे भी वंचित थी। अतः रियासत में प्रजा के पूर्णतः उत्तरदायी शासन की स्थापना और फिर भारतीय संघ में रियासत के विलनीकरण का कार्य पूर्ण कराने का लक्ष्य जन नेताओं तथा कार्यकर्ताओं के समक्ष था।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है, कि सारंगढ़ रियासत में राजनीतिक जागरुकता, उत्तरदायी शासन की मांग तथा रियासती शासक तथा ब्रिटिश सत्ता के मिले जुले अत्याचारों से रियासती जनता का मुक्ति हेतु प्रयास आदि प्रमुख गतिविधियाँ स्वाधीनता आंदोलन के दौरान रही है।

3.5. सारंगढ़ रियासत विलय की ओर :

यद्यपि सारंगढ़ रियासत के भारतीय संघ में विलय की प्रक्रिया देश की अन्य रियासतों की तुलना में विशेष महत्वपूर्ण नहीं कही जा सकती, किन्तु उल्लेखनीय तथ्य यह है, कि रियासतों को भारतीय संघ में विलीन कराने के लिये आंदोलन का प्रारंभ छत्तीसगढ़ की रियासतों से ही हुआ, सारंगढ़ रियासत भी उनमें से एक थी।[117]

बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में जब भारत में राजनैतिक आंदोलनों का दौर शुरु हुआ, इसी के साथ ही रियासतों के सामूहिक हितो को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से 8 फरवरी 1921 को नरेन्द्र मण्डल (चेम्बर ऑफ प्रिन्सेज) का गठन ब्रिटिश ताज की राजकीय घोषणा के साथ हुआ नरेन्द्र मंढल 120 नरेश सदस्यों की सभा थी, जिसके सदस्य देशी रियासतों के मानक शासक होते थे। वर्ष में एक बार दिल्ली में वायसराय की अध्यक्षता में इसकी बैठक अवश्य होती थी, वायसराय की अनुपस्थिति में बैठक की अध्यक्षता नरेन्द्र मंडल का अध्यक्ष करता था। नरेन्द्र मंडल के अध्यक्ष का चुनाव शासकों के द्वारा होता था, अध्यक्ष की सहायता के लिये सात सदस्यीय कार्यकारणी होती थी। नरेन्द्र मंडल की कार्यकारणी वर्ष भर की क्रियाकलापों तथा नरेशों की मांग को वार्षिक सम्मेलन में वायसराय केसम्मुख प्रस्तुत करती थी । इस प्रकार नरेन्द्र मण्डल ब्रिटिश सर्वोपरिता तथा देशी रियासतों के संबंधों के विकास की महत्वपूर्ण संस्था से अधिक राजनीतिक सुविधा तथा अधिकारों की प्रति की अभिलाषा जगाई, किन्तु ब्रिटिश सर्वोपरिता व्यावहारिक रुप में राज्यों को अधिक शक्तिशाली बनाना नहीं चाहती थी।[118]

भारत की संवैधानिक तथा रियासतों से संबंधित समस्याओं पर विचार करने के लिये इंग्लैंड के प्रधानमंत्री रैम्जे मैक्डोनल्ड ने लंदन में गोलमेज सम्मेलन आयोजित किया। प्रथम गोलमेज सम्मलेन 1930 की शीत ऋतु में आयोजित किया गया, जिसमें भारत की सोलह रियासतों के शासक आमंत्रित किये गये। इसमें छत्तीसगढ़ क्षेत्र से कोरिया के राजा रामानुज प्रताप सिंह देव ने भाग लिया।[119] प्रथम गोलमेज सम्मेलन में रियासतों के प्रस्तावित अखिल भारतीय संघ में सम्मिलित करने की दिशा में विचार विमर्श किया गया, किन्तु कांग्रेस के प्रतिनिधियों के आमंत्रित न किये जाने तथा उनकी भागीदारी के बिना यह सम्मेलन उसी प्रकार का था, जैसे प्रिंस ऑफ डेनमार्क की भूमिका के बिना हेमलेट का मंचन।[120]

इन दिनों भारत में गांधीजी के नेतृत्व में सविनय अवज्ञा आंदोलन चल रहा था। अगले गोलमेज सम्मेलन में कांग्रेस प्रतिनिधियों को आमंत्रित करने के उद्देश्य से वायसराय लार्ड इरविन ने 5 मार्च 1931 को गांधीजी के साथ समझौता किया, जिसके अंतर्गत कांग्रेस ने सविनय अवज्ञा आंदोलन समाप्त करने तथा द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने सहमति दी एवं 30 मार्च को रांची अधिवेशन में गांधीजी को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया । द्वितीय गोलमेज सम्मेलन की कार्यवाही 7 मार्च 1931 को प्रारंभ हुई उसमें गांधी जी के अतिरिक्त पं. मदन मोहन मालवीय,

सरोजनी नायडू, सर मुहम्मद इकबाल, सर अली इमाम, तथा घनश्यामदास बिड़ला ने नये प्रतिनिधियों के रुप में भाग लिया। रियासतों के वही प्रतिनिधि शासक जो पूर्व में प्रथम गोलमेज सम्मेलन में सम्मिलित हुये थे। इस सम्मेलन में रियासतों और ब्रिटिश प्रांतों को मिलाकर अखिल भारतीय संघ बनाने पर विचार किया गया, दुर्भाग्यवश सम्मेलन में साम्प्रदायिक समस्या का समाधन न हो पाने के कारण यह सम्मेलन अनिर्णित रहा। [121]

तृतीय गोलमेज सम्मेलन नवंबर -दिसंबर 1932 में लंदन में सम्पन्न हुआ, कांग्रेस ने इसमें भाग नहीं लिया। गोलमेज सम्मेलनों के पश्चात् 4 अगस्त 1935 को अनुदारवादियों के विरोध के वावजूद इंग्लैंड की सरकार ने भारत शासन अधिनियम पारित करवा लिया। इस अधिनियम के तहत् भारत में ब्रिटिश प्रांतों तथा रियासतों को मिलाकर एक संघ बनाने का प्रस्ताव किया गया था। रियासतों को जिन शर्तो पर संघ में सम्मिलित होना था उसकी रुपरेखा तैयार की गई, परन्तु बड़ी रियासतों के शासकों केअड़ियल रवैये के कारण यह संघ मूर्त रुप नहीं ले सका। [122]

अखिल भारतीय देशी रा ज्य लोक परिषद की पंडित नेहरु की अध्यक्षता में लुधियाना अधिवेशन 1939 में जनता के लिये जनता का राज्य स्थापित करने के उद्देश्यों का समर्थन किया गया तथा यह साफ बतलाया गया कि बदली हुई परिस्थिति में छोटी-छोटी रियासतों के लिये कोई स्थान नहीं होगा तथा इस संबंध में प्रस्ताव पारित किया गया कि केवल बड़ी रियासते या उनके संघ पृथक ईकाई के रुप में रहे और छोटी रियासते पड़ोस के प्रांत में जोड़ दी जाये। [123]

रियासतो की समस्या का समाधान करने इंग्लैंड की सरकार ने मार्च 1942 में क्रिप्स आयोग का गठन किया जिसके अध्यक्ष सर स्टफर्ड क्रिप्स थे। भारत पहुंचकर उन्होनें 28 मार्च 1942 को नरेन्द्र मण्डल के प्रतिनिधियों से चर्चा की। [124] क्रिप्स के साथ नरेन्द्र मंडल के प्रतिनिधियों को दूसरी भेंट 2 अप्रैल 1942 को हुई, इसमें भी समझौते की कोई दिशा निर्धारित नहीं हुई। [125] क्रिप्स मिशन की असफलता के पश्चात् 8 अगस्त 1942 को भारत छोड़ो आंदोलन का सूत्रपात हुआ। रियासत की जनता ने भी प्रजा मंडल के तत्वाधान में आंदोलन छेड़ रखा था पर इससे रियासत में स्थिति विस्फोटक होती जा रही थी।

यह उल्लेखनीय है, कि नरेन्द्र मंडल ने सन् 1935 में भारतीय संघ में देशी रियासतों के सम्मिलित होने से इकार करके रियासतों के भारत में विलय का मार्ग अर्थ अवरुद्ध कर दिया। परन्तु 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन तथा परवर्ती घटनाक्रमों ने नरेन्द्र मंडल की इन नीतियों में परिर्वतन लाया। रियासतों में आंदोलन से उनका अस्तित्व खतरे में था, अत: नई नीति की आवश्यकता थी।

सन् 1944 में भोपाल के नवाब नरेन्द्र मंडल के चांसलर बने। वे रियासतों को भारतीय राजनीति में तीसरी शक्ति के रुप में स्थापित करना चाहते थे। 27 जुलाई को उन्होनें घोषणा की कि रियासतों का पृथक संगठन बनाया जाना चाहिये। [126] नरेन्द्र मंडल की स्थायी समिति ने 18 सितंबर 1944 को यह प्रस्ताव पारित किया -

नरेन्द्र मंडल स्पष्ट एवं दृढ़ शब्दों में यह मान्यता दुहराना आवश्यक समझता है, कि रियासतों के ताज के

साथ संबंध तथा रियासतों के संबंध में ताज के अधिकार संबंधित राज्य की समाप्ति के बिना किसी तृतीय पक्ष या अधिकारी को हस्तांतरित नहीं किये जायेगें।[127]

उपरोक्त प्रस्ताव से रियासतों के भारतीय संघ में विलनीकरण की प्रक्रिया में अवरोध आया । वायसराय लार्ड वेवेल रियासतों के पृथक संघ के पक्ष में नहीं थे , तथापि उनकी मान्यता थी, कि रियासतों की अनुमति के बिना रियासतों तथा ताज के बीच के संबंधो को किसी अन्य सत्ता को हस्तांतरित नहीं किया जाना चाहिये। [128]

24 मई 1946 को केबिनेट मिशन भारत आया तथा उसने भारतीय रियासतों की समस्या के समाधान के लिये नरेन्द्र मण्डल के अध्यक्ष एवं बड़ी, मंझौली तथा छोटी रियासतों के प्रतिनिधियों से अलग-अलग चर्चाएं की। छोटी रियासतों ने संप्रभुता समाप्त होने की स्थिति में स्वतंत्र होने की इच्छा व्यक्त की। [129]

भारतीय समस्याओं के समाधान के लिये केबिनेट मिशन ने 16 मई 1947 को एक योजना प्रकाशित की जिसमें भारत और रियासतों को संयुक्त कर भारत में एक संघ की स्थापना का सुझाव दिया गया। [130] किन्तु उसमें यह भी स्पष्ट किया गया था, कि ब्रिटिश भारत के स्वाधीन होते ही ब्रिटिश सरकार रियासतों पर अपनी संप्रभुता को न तो अपने पास रखेगी और न ही नई सरकार को हस्तांतरित करेगी। अत: रियासते स्वाधीन भारत के साथ अपने संबंधों का निर्धारण करने के लिये स्वतंत्र होगी।[131] केबिनेट मिशन की उक्त घोषणा से भारतीय रियासतों के शासकों में अपनी स्वाधीनता प्राप्त करने की इच्छा स्वाभाविक रुप से बलवतीं हुई।

20 फ़रवरी 1947 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली ने हाउस ऑफ कॉमन्स में यह घोषणा की, कि भारत में सत्ता का हस्तांतरण जून 1948 तक कर दिया जायेगा। [132] किन्तु रियासतों के संबंध में उसने घोषित किया, कि उनकी सत्ता किसी अन्य केन्द्रीय ब्रिटिश भारत को नहीं सौंपी जायेगी। यह घोषणा ब्रिटिश मंत्री द्वारा लार्ड सभा में भी घोषित कर दिया गया। [133]

एटली की घोषणा तथा लार्ड माउण्ट बेटन द्वारा मार्च 1947 में वासराय का पद ग्रहण करने के पश्चात् रियासतों के विलय की प्रक्रिया में तेजी आयी। वायसराय ने नरेन्द्र मंडल की स्थायी समिति तथा साधारण सभा को संबोधित कर स्वाधीन भारत में विलय पर जोर दिया।[134]

ब्रिटिश भारत की संवैधानिक सभा के प्रतिनिधियों तथा नरेन्द्र मंडल द्वारा नियुक्त समझौता समिति के सदस्यों के विचार विमर्श में अधिकांश रियासतो के शासकों ने स्वाधीन भारत में विलय के प्रति अपनी सहमति प्रकट की। इन परिस्थितियों में माउण्ट बेटन ने सत्ता हस्तांतरण के संबंध में 3 जून 1947 को जो योजना बनाई उसमें भारत को दो डोमिनियमों में विभाजित करने के साथ रियासतों के किसी एक डोमिनियनों के साथ विलय करने अथवा स्वतत्र रहने की घोषणा की गयी।[135] भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम 1947 के पारित होने के साथ ही रियासती क्षेत्र में पृथकतावादी तत्व सक्रिय हो गया।

25 जून 1947 को मंत्रिमंडल की स्वीकृति से तत्कालीन उप प्रधानमंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल के अधीन एक पृथक स्टेटस डिपार्टमेंट की स्थापना की गयी। विभाग के प्रमुख अधिकारियों मे वी पी मेनन, सी सी देसाई,

तथा जी.बी. गोस्वामी जैसे कर्मठ तथा दूरदर्शी अधिकारी थे। सरदार वल्लभभाई पटेल ने भारत की रियासतों के नरेशों से अपील की कि वे भारतीय संघ में शामिल होकर प्रतिरक्षा, विदेश नीति तथा संचार संबंधी मसलों पर भारतीय संघ का नेतृत्व स्वीकार करें। उन्होंने भारतीय इतिहास में राजतंत्रों के राष्ट्रहित के लिये त्याग का जिक्र करते हुये अनुरोध किया कि भारतीय संघ में शामिल होकर राष्ट्रहित के लिये बदले हुये युग में अपने राजनीतिक दूरदर्शिता एवं राष्ट्ररक्षा के लिये अपना योगदान दे। [136]

भारत को शीघ्र स्वतंत्रता मिलने की संभावनाओं के परिपेक्ष्य में विशेषकर छोटी रियासतों में गतिविधियां तीव्र गति से चल रही थी। यद्यपि स्टेट्स डिपार्टमेंट ने इस रियासतों से संपर्क बनाने के उद्देश्य से संबलपुर में एक क्षेत्रीय आयुक्त तथा रायपुर में एक क्षेत्रीय उपआयुक्त को नियुक्त किया था, तथापि बड़े राज्यों में उलझे रहने के कारण केन्द्र सरकार इन छोटी रियासतों पर विशेष ध्यान नहीं दे पायी। [137]

छत्तीसगढ़ तथा उड़ीसा क्षेत्र के शासकों ने ईस्टर्न स्टेट्स यूनियन गठित किया तथा जिसके मुख्यालय का उद्घाटन 1 अगस्त 1947 को रायगढ़ में किया गया। [138]

सारंगढ़ रियासत की जनता इन नाटकीय कार्यवाहियों से असंतुष्ट थी। स्टेट कांग्रेस ने दरबार से रियासत के विलनीकरण की मांग की तथा रियासती जनता को आंदोलन में सम्मिलत होने के लिये प्रेरित करना प्रारंभ किया। रियासती शासन आंदोलन को कुचलने कर प्रयत्न करती रही, किन्तु आंदोलनकारियों ने 6 दिसंबर 1947 को विलनीकरण का प्रस्ताव पारित कर भारत सरकार को प्रेषित किया। [139]

भारत सरकार का स्टेट डिपार्टमेंट इस दिशा में सतत् क्रियाशील था। शीघ्र ही भारतीय सरकार द्वारा रियासतों के विलनीकरण की प्रक्रिया आरंभ कर दी गयी। सरदार पटेल छत्तीसगढ़ की रियासतों को मध्यप्रांत में सम्मिलित करने कृतसंकल्प थे। [140]

15 दिसंबर 1947 को नागपुर में सरदार पटेल के समक्ष छत्तीसगढ़ की रियासतों के राजाओं ने इस हेतु अपनी सहमति दे दी। सारंगढ़ के राजा नरेशचन्द्र सिंह ने विलय पत्र पर हस्ताक्षर कर स्टेट डिपार्टमेंट के सचिव व्ही. पी. मेनन को प्रेषित कर दिये। [141]

इस प्रकार सारंगढ़ रियासत का भारतीय संघ में विलय हो गया। यह विदित हो, कि सारंगढ़ रियासत इतनी शक्तिशाली नहीं थी, कि वह भारत की स्वाधीनता के पश्चात् अपना स्वतंत्र अस्तित्व बचा पाती, फिर इस रियासत में विलनीकरण आंदोलन भी जोर पकड़ रहा था। हालांकि अपने अस्तित्व की रक्षा के लिये सारंगढ़ रियासत ने ईस्टर्न स्टेट्स यूनियन में सम्मिलित होना स्वीकार किया। परन्तु यह प्रक्रिया रियासत में स्वतंत्र अस्तित्व को बचा न सकी। अब सरदार पटेल की लौह नीति ने यह निश्चित कर लिया था कि इस रियासत का विलय मध्यप्रांत में होना है तो यह निश्चित था कि रियासत का विलय हो जायेगा। इस विलय के पश्चात् ही क्षेत्र में नवीन युग का सूत्रपात होता है।

पाद टिप्पणी

1. विल्स, सी.यू.-ब्रिटिश रिलेशन्स विथ दी नागपुर स्टेट्स इन एटिन्थ सेन्चुरी,19 26,पृ. 148-150
2. शुक्ल अभिनंदन ग्रंथ- इतिहास खण्ड, पृ. 109
3. गुप्त, प्यारे लाल- प्राचीन छत्तीसगढ़ ,1973, पृ. 134
4. सिन्हा, एच.एन. -सिलेक्शन्स फ्रॉम नागपुर रेसीडेन्सी रिकार्डस, जिल्द 1, पृ.14-15
5. रायगढ़ जिला गजेटियर,1979, पृ. 48
6. विल्स,सी.यू.- पूर्वोक्त, पृ. 39
7. सिन्हा, एच.एन. - पूर्वोक्त, पृ.14
8. चरित्र किताब- सारंगढ़ रियासत की पाण्डुलिपि, पृ. 39,49
9. सिन्हा, एच. एन. -पूर्वोक्त, पृ. 14-15,77
10. डीब्रे, ई. पृ.-सेण्ट्रल प्रॉविन्सेज गजेटियर्स छत्तीसगढ़, फ्यूडेटरी स्टेट्स,1909, पृ. 203-204
11. सिन्हा,एच.एन. -पूर्वोक्त, पृ-60 एवं जेनकिन्स, रिचर्ड-रिपोर्ट ऑन दी टेरीटरीज ऑफ दी राजा ऑफ नागपुर,1827, पृ. 69
12. सरदेसाई, जी. एस. -ए न्यू हिस्ट्री ऑफ मराठाज, जिल्द 3,1948 पृ. 474
13. रायगढ़ जिला गजेटियर, 1979, पृ. 51
14. सिन्हा, एच. एन. -पूर्वोक्त, जिल्द -3,पृ. 69
15. सरदेसाई, जी.एस.-पूर्वोक्त, पृ. 474-75
16. सिन्हा, एच.एन. -पूर्वोक्त जिल्द-4,पृ.81
17. एचिसन, सी.यू.-ए कलेक्शन ऑफ ट्रीटीज इंगेजमेण्ट्स एंड सनद्स रिलेटिंग टू इंडिया एंड नेवरिंग कंट्रीज, जिल्द -2पृ.518
18. सिन्हा, एच.एन.-पूर्वोक्त,जिल्द -4,पृ. 83-84
19. चरित्र किताब -सारंगढ़ रियासत की पाण्डुलिपि पृ.45-46
20. श्रीवास्तव, धानूलाल -अष्टराज्य अम्भोज ,1925, पृ. 8
21. चरित्र किताब -सारंगढ़ रियासत की पाण्डुलिपि, पृ. 45
22. श्रीवास्तव, धानूलाल- पूर्वोक्त, पृ.8
23. एचिसन, सी.यू. - पूर्वोक्त , जिल्द -2,पृ.497
24. डीब्रे, ई. ए.- पूर्वोक्त, पृ. 12
25. चरित्र किताब-सारंगढ़ रियासत की पाण्डुलिपि, पृ.288-89 एवं एचिसन, सी.यू. -पूर्वोक्त जिल्द-2,पृ. 497

26. गुप्त, प्यारेलाल -प्राचीन छत्तीसगढ़, पृ. 136

27. पूर्वोक्त

28. पूर्वोक्त, पृ. 138

29. वर्मा, भगवान सिंह-छत्तीसगढ़ का इतिहास, 1995, पृ. 117

30. मिश्र, डॉ. बलदेव प्रसाद-छत्तीसगढ़ परिचय,पृ 118

31. गुप्त, प्यारेलाल - पूर्वोक्त, पृ. 138

32. आर्कवोल्ट, डब्ल्यू. ए. जे. -आऊट लाइन ऑफ इंडियन कांस्टीयूशनल हिस्ट्री, 1973, पृ. 108-19

33. खान, एम.ए. -फॉरमेशन एंड एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ सेण्ट्रल प्रॉविन्सेज 1861-1870,1979, पृ. 1

34. पॉवेल -द लैण्ड रेवेन्यू ऑफ ब्रिटिश इंडिया, पृ. 360

35. मजूमदार, आर.सी.-ब्रिटिश पैरामाउण्ट सी एंड इंडियन रेने सां, भाग -1 पृ. 807

36. डाडवेल, एच.एच. -कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया, भाग.6,पृ. 276

37. सी.पी. पोलिस मैनुअल, 1931, पृ. -4

38. शील, योगेन्द्रनाथ -मध्यप्रदेश और बरार का इतिहास ,1922, पृ.277

39. हाण्डा, राजेन्द्रलाल - देशी रियासतों में स्वाधीनता संग्राम का इतिहास, 1969, पृ. 25

40. केला, भगवानदास- देशी राज्यशासन, 1947, पृ. 23

41. फॉरेन डिपाटमेंट (पोलिटिकल ए) प्रोसिडिंग्स अगस्त 1862 क्रमांक 7-11

42. फॉरेन डिपाटेमेंट (पोलिटिकल ए) प्रोसिडिंग्स जून 1864 क्र. 14-16 एवं टेम्पल, रिचर्ड - रिप्रिन्ट ऑफ दी रिपोर्ट ऑन दी जमीदारिज एंड अदर पेटी चीफटेनसीज इन सेण्ट्रल प्रॉविन्सेज इन 1863

43. नागपुर रेसीडेन्सी एंड सेक्रेटरियट रिकार्डस फाइल नं. 14 क्र. 14, सन् 1864, एवं फॉरेन डिपार्टमेंट (पोलिटिकल ए) प्रोसिडिंग्स मार्च 1865, क्र. 126-135

44. फॉरेन डिपार्टमेंट (पोलिटिकल ए) प्रोसिडिंग्स मई 1865 क्र. 269-271, एवं शील, योगेन्द्रनाथ -पूर्वोक्त , पृ. 250

45. एचिसन, सी.यू. -पूर्वोक्त, पृ. 390, एवं डीब्रे, ई. ए. -पूर्वोक्त, पृ. 12-13

46. फॉरेन डिपार्टमेंट (पोलिटिकल ए) प्रोसिडिंग्स सिंतबर 1866, क्र. 23-25 एवं फॉरेन एंड पोलिटिकल डिपार्टमेंट (पोलिटिकल ए) प्रोसिडिंग्स दिसंबर 1866, क्र. 117-39

47. फॉरेन डिपार्टमेंट (इंटरनल ए) प्रोसिडिंग्स अक्टूबर 1887, क्र. 204-205, एवं एचिसन, सी.यू. -पूर्वोक्त, पृ.393

48. फॉरेन एंड पोलिटिक डिपार्टमेंट प्रोसीडिंग्स सितंबर199, क्र. 5-6 पार्ट बी

49 फॉरेन एंड पोलिटिकल डिपार्टमेंट प्रोसीडिंग्स मार्च 1921 क्र. 5(2)

50. फॉरेन एंड पोलिटिकल डिपार्टमेंट फाईल नं.193 आर. रिफार्म ब्रांच नं. 1-3

51. फॉरेन एंड पोलिटिकल डिपार्टमेंट कान्फीडेन्शियल फाईल नं. 165 पी. 1933

52. श्रीवास्तव रमन- पैरामाउण्टसी एंड छत्तीसगढ़ रूलर्स शोधप्रबंध, रविवि. रायपुर, पृ. 158

53. केला, भगवानदास- देशी राज्य शासन, 1947, पृ. 52

54. पूर्वोक्त

55. बैजनाथ महोदय- रियासतों का सवाल, 1947, पृ.3-4

56. मेनन, व्ही. पी. -स्टोरी ऑफ इण्टीग्रेशन ऑफ इंडियन स्टेट्स,1956 पृ. 151-57

57. पाणिक्कर, के एम. -एन इण्ट्रोडक्शन टू दी स्टडी ऑफ दी रिलेशंस ऑफ दी इण्डियन स्टेट्स विथ दी गव्हर्नमेंट ऑफ इंडिया,1929,पृ.20

58. बैजनाथ महोदय- रियासतों का सवाल,1947,पृ.19

59. मेहरोत्रा, एस. आर.- टू वर्डस इंडियाज फ्रीडम एंड पारटीसन, 1979, पृ. 234

60. कुलकर्णी, बी.वी. -ब्रिटिश डोमिनियन इन इंडिया एंड आफटर,1964, पृ. 153

61. वर्मा, भगवान सिंह- छत्तीसगढ़ इतिहास,1991 पृ. 117-18

62. पाणिक्कर, के.एम.-पूर्वोक्त, पृ. 121-31

63. बनर्जी,ए.सी.-इंडियन कास्टीट्यूशनल डाक्युमेण्ट्स, भाग-2ख1961, पृ. 351-53

64. रिपोर्ट ऑन दी इंडियन कान्स्टीट्युशनल रिफार्मस, 1918, पृ. 194

65. डॉडवेल, एच.एच. -कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया, भाग-6,1958, पृ. 673

66. बैजनाथ महोदय-पूर्वोक्त, पृ. 20,32

67. मित्रा, आर.एन.- संघवाद, 1968, पृ.94-96

68. पूर्वोक्त ,पृ. 98

69. शील, योगेन्द्रनाथ- मध्यप्रदेश और बरार का इतिहास, 1922 पृ. 250-77

70. फॉरेन डिपार्टमेंट (पोलिटिकल ए) प्रोसिडिंग्स मई 1865, पृ. 269-71

71. चरित्र किताब- सारंगढ रियासत की पाण्डुलिपि,पृ. 258

72. श्रीवास्तव, धानूलाल- अष्टराज्य अम्भोज,1925 पृ. 9

73. फॉरेन डिपार्टमेंट (पोलिटिकल ए) प्रोसिडिंग्स जनवरी 1866 क्र. 182-83

74. एचिसन, सी.यू. - पूर्वोक्त जिल्द-2, पृ. 548-49

75. एचिसन, सी.यू.- पूर्वोक्त, जिल्द-4, पृ. 447

76. फॉरेन एंड पोलिटिकल डिपार्टमेंट फाइल नं. 273 पी (एस) 36 सीरीयल नं. (1) (24)

77. श्रीवास्तव, रमन- ब्रिटिश पैरामाउण्टसी एंड छत्तीसगढ़ रुलर्स, शोध प्रबंध रविवि. 1975, पृ.205

78. झा, सुभाषदत्त -छत्तीसगढ़ का प्रशासनिक इतिहास, शोध प्रबंध रविवि, पृ. 23

79. एचिसन , सी.यू. - पूर्वोक्त जिल्द -4,पृ. 389

80. श्रीवास्तव, रमन- पूर्वोक्त, पृ. 86
81. चरित्र किताब- सारंगढ़ रियासत की पाण्डुलिपि, पृ. 237-38 एवं फॉरेन डिपार्टमेंट (पोलिटिकल ए) प्रोसिडिंग्स सितंबर 1866, पृ.23-25
82. लोथियन, ए.सी. - कॉन्स्टीट्यूशनल पोजिशन ऑफ दी स्टेट्स इन बिहार, उड़ीसा, एंड सेन्ट्रल प्रोविन्सेज, फॉरेन डिपार्टमेंट फाइल नं. 193 आर.
83. एजेन्सी फाइल नं. 6सी. 1-42
84. बैजनाथ महोदय -पूर्वोक्त, पृ. 20-26
85. एचिसन, सी.यू. - पूर्वोक्त,जिल्द-4,पृ. 447
86. चरित्र किताब -सारंगढ़ रियासत की पाण्डुलिपी, पृ. 45
87. एचिसन, सी.यू. -पूर्वोक्त जिल्द -2,पृ. 497 एवं चरित्र किताब- सारंगढ़ रियासत की पाण्डुलिपि, पृ. 50
88. फॉरेन डिपार्टमेंट (पोलिटिकल ए) प्रोसिडिंग्स जून 1864 क्र. 14-16
89. चरित्र किताब- सारंगढ़ रियासत की पाण्डुलिपि, पृ. 50 एवं एचिसन, सी.यू. -पूर्वोक्त,जिल्द-2, पृ. 497
90. फॉरेन डिपार्टमेंट (इंटरनल ए) प्रोसीडिंग्स जून 1888 क्र. 233-42
91. फॉरेम डिपार्टमेंट (इंटरनल ए) प्रोसिडिंग्स सिंतबर 1908, क्र. 159-68
92. डीब्रे, ई.ए. - सेण्ट्रल प्रॉविन्सेज गजेटियर्स छत्तीसगढ़ फ्यूडेटरी स्टेट्स, 1909,पृ. 169-206
93. रायगढ़ जिला गजेटियर,1979, पृ. 55
94. शील, योगेन्द्रनाथ -पूर्वोक्त, पृ. 307
95. फॉरेन डिपार्टमेंट (इंटरनल ए) प्रोसिडिंग्स जनवरी 1889, क्र. 26-28
96. फॉरेन डिपार्टमेंट (इंटरनल ए) प्रोसिडिंग्स फरवरी 1889, क्र. 322-324
97. फॉरेन डिपार्टमेंट (इंटरनल ए) प्रोसीडिंग्स अक्टूबर 1890, क्र. 44-46, पृ. 73
98. डीब्रे, ई.ए. -पूर्वोक्त, 206
99. क्राउन रिप्रेजेन्टेटिव रिकार्डस (माइक्रोफिल्म एक्सेशन क्रमांक 355 ईस्ट 4) पोलिटिकल डिपार्टमेंट पोलिटिकल ब्रांच फाइल नं. 6 (7) पी. सीक्रेट/40,1940
100. पूर्वोक्त
101. डीब्रे, ई.ए. -पूर्वोक्त, पृ. 206
102. चरित्र किताब- सारंगढ़ रियासत की पाण्डुलिपि, पृ. 129, 134-38, 153-54,222 एवं 262
103. देव, अभय प्रताप- छत्तीसगढ़ के सामंतीय रियासतों में जनजागृति, लघुशोध प्रबंध गुधाविवि, बिलासपुर 1989-90, पृ. 92
104. रायगढ़ जिला गजेटियर, 1979, पृ. 56
105. पूर्वोक्त

106. देव, अभय प्रताप- पूर्वोक्त, पृ. 92

107. साप्ताहिक कर्मवीर, खण्डवा,16 अगस्त 1941

108. देव, अभय प्रताप - पूर्वोक्त, पृ. 93

109. महाकोशल, रायपुर,17 अक्टूबर 1946

110. काश्मीरी, श्यामनारायण छत्तीसगढ़ क्रांति की लपटो में , 1947, पृ. 3

111. दरबार ऑफिस सारंगढ़ स्टेट ई. एस.ए. कम्पाएलेशन नं. 1/ए पार्ट 2, 4/ सी मेजर हेड अफेयर्स माइनर हेड रिफार्मस इन दि स्टेट

112. मध्यप्रदेश संदेश -(आलेख) रामकुमार अग्रवाल -रायगढ़ और स्वाधीनता की लड़ाई, स्वाधीनता आंदोलन विशेषांक, 15 अगस्त 1987, पृ. अ-154

113. सारंगढ़ स्टेट एनुअल एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट 1938-40, पृ. 8

114. हिन्दुस्तान हेराल्ड, नागपुर, 26 नवंबर 1946

115. साप्ताहिक कर्मवीर, खण्डवा, 26 फरवरी 1937, 26 जुलाई तथा 16 अगस्त 1941

116. मध्यप्रदेश संदेश - पूर्वोक्त, पृ .154

117. काश्मीरी, श्याम नारायण- पूर्वोक्त, पृ. 31

118. हाण्डा, आर.एल. -फ्रीडम स्ट्रगल इन प्रिंसली स्टेटस, पृ.200-204

119. मेनन, व्ही.पी.- इन्टीग्रेशन ऑफ दी इंडियन स्टेट्स, 1985, पृ. 27-28

120. सक्सेना, आभा- इंडियन नेशनल मूव्हमेंट एंड लिबरल्स, 1987, पृ. 21

121. मेनन, व्ही. पी. - पूर्वोक्त पृ. 30

122. पूर्वोक्त, पृ. 30

123. बैजनाथ महोदय - रियासतों का सवाल पृ. 9

124. मानसर्ग एवं लुम्बी (सं-) ट्रांसफर ऑफ पावर खण्ड -1 क्र. 1010,पृ. 510

125. पूर्वोक्त ,क्र. 498, पृ. 610

126. पूर्वोक्त, क्र.607, पृ. 1125

127 पूर्वोक्त, खण्ड 5, क्र. 12, पृ. 25

128. मेनन ,व्ही. पी. -पूर्वोक्त,पृ 58

129 मानसर्ग एवं लुम्बी (सं -) पूर्वोक्त, खण्ड 7, क्र. 31, पृ. 127

130. बैजनाथ महोदय -पूर्वोक्त, पृ. 65-66

131 मेनन, व्ही.पी. -पूर्वोक्त ,पृ.64-65

132. मानसर्ग एवं लुम्बी (सं.) -पूर्वोक्त खंड -7 ,क्र. 477, पृ.840

133. आजकल, रायगढ़ दरबार के सहयोग से प्रकाशित समाचार पत्र, संपादक पूर्णचंद गुप्ता, 20 फरवरी 1947

134. सिंह, लक्ष्मण पोलिटिकल एंड कान्स्टीट्युशनल डेव्हलपमेंट इन दी प्रिंसली स्टेट्स ऑफ राजस्थान, 1970, पृ. 122

135. मानसर्ग एवं लुम्बी (सं.) -पूर्वोक्त खंड 10, क्र. 45, पृ.86.

136. व्हाइट पेपर्स आन इंडियन स्टेट्स, भारत शासन द्वारा प्रकाशित, 1950, पृ. 157-58

137. मेनन, व्ही.पी. -पूर्वोक्त पृ. 151

138. इंडियन स्टेट्स एंड जमीदारीज (समाचार पत्र) सिकंदराबाद, 31 अगस्त 1947

139. काश्मीरी, श्यामनारायण पूर्वोक्त ,8,23-24

140. दुर्गा दास (सं.)- सरदार पटेल करस्पॉडेन्स, खण्ड 5, पृ. 371-72

141. पोलिटिकल डिपार्टमेंट एंड मिनिस्ट्री ऑफ स्टेट्स पी. आर. ब्रांच फाइल नं. 08 (97) पी. आर./47 प्रोसीडिंग्स (1)-(5) तथा फाइल नं. 8 (95) पी.आर. ब्रांच /47 (1) (5)